प्रसार दूत

कृषि विज्ञान की अग्रणी पत्रिका

दिसम्बर 2021

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)
कृषि प्रौद्योगिकी आकलन एवं स्थानान्तरण केन्द्र
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली–110012

संपादकीय

आप सभी को नववर्ष की बहुत–बहुत शुभकामनाएँ। इस वर्ष हमारा देश आजादी के 75 वर्ष पूरे होने के उपलक्ष्य में आजादी का अमृत महोत्सव मना रहा है। सिंहावलोकन करें तो पाएंगे कि इन वर्षों में हम आजाद हवा में अपने पैरों पर खड़े होना सीख रहे हैं। तरक्की की रफ्तार धीमी है, लेकिन अपनी गलतियों से सीखकर संभल भी रहे हैं। आज 75 वर्षों में हम वैश्विक पटल पर अपनी अलग पहचान बनाने में सफल हुए हैं। इसमें कोई दो राय नहीं कि गति धीमी है, परंतु लोकतांत्रिक व्यवस्था में सबको साथ लेकर चलने का भाव है। जब हम एक वैश्विक अर्थव्यवस्था होने का दम भरते हैं, तो आश्वस्ति होती है कि हमारे पीछे एक सुदृढ़ कृषि व्यवस्था मौजूद है, जो तमाम मुश्किलों में देश को संभाले रहेगी। हम अनेक आर्थिक मंदियों और कोविड के दौर से गुजरने के बाद इसीलिए संभल पाए हैं क्योंकि कृषि हमारी बुनियाद में हैं। देश की बहुसंख्य आबादी सीधे कृषि में संलग्न है, जिससे सरकारों की बाध्यता हो जाती है कि अपनी नीतियों के केंद्र में कृषि और किसान को तरजीह दे।

इस वर्ष कुदरत की मेहरबानी भी किसानों पर रही। वर्षा आवश्यकता से अधिक ही हुई, जिससे अनुमान के अनुसार खरीफ की पैदावार अच्छी मिली। परंतु आप सभी जानते हैं कि आजकल अच्छी पैदावार होना ही काफी नहीं है, अच्छा विपणन भी जरूरी है। किसानों को उनके उत्पादों के अच्छे दाम कैसे सुनिश्चित हों, यह आज भी एक बहुत बड़ी चुनौती है। तमाम प्रयासों के बावजूद कृषि विपणन के लिए एक सुसंगठित नेटवक्र तैयार नहीं हो पाया है। इसकी भरपाई के लिए सरकार किसान उत्पादक संगठनों (एफ.पी.ओ.) को बढ़ावा देने के लिए देशव्यापी कार्यक्रम चला रही है। यदि यह प्रयास सफल होता है, तो कृषि विपणन की जिम्मेदारी इन संगठनों के माध्यम से पूरी की जा सकती है। ये संगठन कृषि के क्षेत्र में उत्पादन, प्रसंस्करण, विपणन की सभी कड़ियों को जोड़कर एक पूरी श्रृंखला का निर्माण कर सकते हैं। कृषि के क्षेत्र में मांग–आपूर्ति, उत्पाद एवं सेवाओं के बीच तालमेल बना सकते हैं, देश की जलवायु विविधता को अपने हक में इस्तेमाल कर सकते हैं। हमें प्रयास करना चाहिए कि इन संगठनों को सुदृढ़ बनाने में योगदान दें।

आजकल भोजन के साथ–साथ पोषण पर भी काफी जोर है। उच्च–मध्यम वर्ग, जिसके पास पर्याप्त खरीद क्षमता मौजूद है, वह अपनी सेहत के प्रति सचेत है और इसके कारण पोषण के प्रति जागरुक है। वह समझता है कि भोज्य पदार्थों में विविधता जरूरी है, इसलिए दैनिक आहार में मोटे अनाजों को भी शामिल करने के लिए तैयार है। पहले जिन मोटे अनाजों को खाना कम पसंद किया जाने लगा था, अब उन्हीं के लिए पैसा खर्च करने को राजी है। यह ग्राहक वर्ग किसानों के लिए नया संभावनाशील बाजार बन सकता है। इसीलिए वर्ष 2023 को संयुक्त राष्ट्र संघ ने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मिलेट वर्ष के रूप में मनाने का फैसला किया है। किसानों को चाहिए कि इसके लिए अपनी तैयारी पूरी रखें। इस बाजार में निहित अवसरों को पहचानें और इनका लाभ उठाएँ।

आप सभी को मालूम होगा कि हमारा संस्थान अपने वार्षिक पूसा कृषि विज्ञान मेले का आयोजन मार्च, 9–11, 2022 के दौरान कर रहा है। इस वर्ष के मेले का मुख्य विषय "खाद्य, पोषण और आजीविका" रखा गया है, और मुख्य प्रदर्शनी इसी विषय पर होगी। तीन दिन तक चलने वाले इस मेले में पूसा संस्थान एवं देश के सभी प्रमुख सरकारी–गैर सरकारी संस्थानों, कृषि कंपनियों के उत्पादों, मशीनरी की प्रदर्शनी और बिक्री होगी। तीनों दिन तकनीकी सत्र एवं

वैज्ञानिक किसान चर्चाएँ आयोजित की जाएंगी। देशभर से चुनींदा प्रगतिशील किसानों को नवोन्मेषी किसान और पूसा अध्येता किसान के रूप में सम्मानित किया जाएगा और उनकी जुबानी उनकी सफलता की कहानियाँ सुनने को मिलेगी। यह देशभर के किसानों एवं कृषि से जुड़े सभी कर्मियों के लिए ज्ञानार्जन का एक सुनहरा मौका है। हर वर्ष देशभर से हजारों किसान इसमें भाग लेने के लिए आते हैं। तथापि कोविड की आशंका को देखते हुए किसानों के ठहरने की व्यवस्था नहीं की गई है। इस मेले के सभी सत्रों का सीधा प्रसारण संस्थान के यूट्यूब चैनल के जरिए किया जाएगा, जिसका लिंक संस्थान की वेबसाइट पर मेले के दौरान मौजूद रहेगा, जिसके माध्यम से सभी किसान घर बैठे इस मेले का आनंद उठा सकते हैं।

साथियो, जब तक यह अंक आपके पास पहुँचेगा, रबी की फसल खेत पर लगी होगी। वर्तमान समय और इसकी कृषि आवश्यकताओं को मद्देनजर रखते हुए प्रसार दूत के इस अंक में समसामयिक विषयों पर आलेख शामिल किए गए हैं, जिनमें मुख्य गर्मी के मौसम में करेला उत्पादन, प्याज की वैज्ञानिक खेती, पूसा भिन्डी– 5 : भिन्डी की पीत शिरा मोजैक विषाणु रोग प्रतिरोधी नई प्रजाति, सौंदर्य से संपन्न शीत ऋतु वाले मौसमी पुष्पों की वैज्ञानिक खेती, उत्तर भारत में अंगूर के बागों की सधाई और काट–छाँट की वैज्ञानिक विधियाँ, व्यवसायिक फूलों मे रोग एवं कीट प्रबंधन, लाभदायक कृषि के लिये उन्नत कृषि यंत्र एवं तकनिकी, अनार के उभरते जड़ गॉठ सूत्रकृमि का प्रबंधन, गोभीवर्गीय सब्जियों में माहू का एकीकृत कीट प्रबंधन, सतत पाम तेल उत्पादन हैं। उम्मीद है इनसे आपको लाभ होगा। यह अंक आपको कैसा लगा, पत्र लिखकर अवगत कराएँ।

संपादक

दिसम्बर 2021

प्रसार दूत

वर्ष 26 | 2021 | अंक-4

संरक्षक

डॉ. अशोक कुमार सिंह

निदेशक

डॉ. बी.एस. तोमर

कार्यवाहक संयुक्त निदेशक (प्रसार)

प्रधान सम्पादक

डॉ. जे.पी.एस. डबास

सम्पादक

डॉ. एन.वी कुंभारे

सम्पादक मंडल

डॉ. राजीव कुमार सिंह

डॉ. गोगराज सिंह जाट

श्री के. एस. यादव

डॉ. हरीश कुमार

डॉ. वाई. पी. सिंह

श्री आनन्द विजय दुबे

तकनीकी सहयोग

श्री विजय सिंह जाटव

श्री लक्खी राम मीणा

श्री राजेश सिंह

शुल्क और लेख भेजने एवं पत्रिका मंगाने का पता

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)

भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान

नई दिल्ली–110012

फोनः 011–25841039

पूसा एग्रीकॉमः 1800118989 (टोल फ्री)

ई–मेंलः incharge_atic@iari.res.in

वेबसाइटः www.iari.res.in

विषय सूची | पृष्ठ संख्या

सम्पादकीय

1. गर्मी के मौसम में करेला उत्पादन 1
2. प्याज की वैज्ञानिक खेती 5
3. पूसा भिन्डी– 5 : भिन्डी की पीत शिरा मोजैक विषाणु रोग प्रतिरोधी नई प्रजाति 12
4. सौंदर्य से संपन्न शीत ऋतु वाले मौसमी पुष्पों की वैज्ञानिक खेती 15
5. उत्तर भारत में अंगूर के बागों की सधाई और काट–छाँट की वैज्ञानिक विधियाँ 21
6. व्यवसायिक फूलों मे रोग एवं कीट प्रबंधन 25
7. लाभदायक कृषि के लिये उन्नत कृषि यंत्र एवं तकनिकी 37
8. अनार के उभरते जड़ गॉठ सूत्रकृमि का प्रबंधन 41
9. गोभीवर्गीय सब्जियों में माहु का एकीकृत कीट प्रबंधन 44
10. फलों की सघन बागवानी 46
11. सतत पाम तेल उत्पादन 51

वार्षिक शुल्क ₹ 150/– मनीआर्डर द्वारा | **एक प्रति मूल्य ₹ 40/–**

गर्मी के मौसम में करेला उत्पादन

गोगराज सिंह जाट एवं बी.एस. तोमर
शाकीय विज्ञान संभाग,
भा.कृ.अनु.प.– भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

गर्मी के मौसम में उगाई जाने वाली महत्वपूर्ण एवं प्रमुख कद्दूवर्गीय सब्जियाँ (खीरा, तरबूज, खरबूज, लौकी, करेला, तोरई एवं कद्दू) आदि शामिल है। इन सब्जियों में कई पोषक तत्व पर्याप्त मात्रा में होते हैं। कद्दू में पाये जाने वाला विटामिन–ए रतोंधी रोग से बचाता है जबकी करेले में पाये जाने वाला चेरेटीन नामक रासायनिक पदार्थ शुगर के रोगियों के लिए बहुत ही लाभदायक साबित होता है। खीरे का भी प्रयोग सलाद के रूप में किया जाता है जो गर्मियों में शरीर को ठंडक प्रदान करता है। तरबूज में पाये जाने वाला लाइकोपीन, आघात और हृदय रोगों के जोखिम को कम करने के साथ–साथ रक्तचाप को सामान्य बनाए रखने और रक्त कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम करने में भी सहायक होता है। गर्मी के मौसम में करेला में अधिक फसल उत्पादन के लिए इसको विभिन्न प्रकार के जैविक तनावों मुख्यतः इसमें लगने वाले हानिकारक कीटो वं बीमारियों के प्रकोप से बचाना अति आवश्यक होता है।

बीज के स्त्रोत

गर्मी के मौसम में उगाई जाने वाली करेले की फसल के बीज किसान भाई विभिन्न सरकारी संस्थानों जैसे भारतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान, नई दिल्ली के शाकीय विज्ञानं संभाग एवं बीज उत्पादन इकाई तथा भारतीय सब्जी अनुसन्धान संस्थान, वाराणसी, भारतीय बागवानी अनुसन्धान संस्थान, हॉसरघटा, बेंगलुरु, राष्ट्रीय बीज निगम, नई दिल्ली, नजदीकी कृषि विज्ञान केंद्र, राज्यों के जिला कृषि अनुसन्धान कार्यालय, राज्यों के राज्य बीज निगम, नजदीकी कृषि विश्वविद्यालयो आदि से प्राप्त कर सकते हैं।

खेत की तैयारी

करेले की फसल को विभिन्न प्रकार की भूमि में उगाया जा सकता है। इनकी खेती के लिए भूमि उच्च कार्बनिक पदार्थ युक्त अच्छी तरह से सूखी हुई एवं उपजाऊ होनी चाहिए। उच्च कार्बनिक पदार्थ युक्त खेत उत्पादन के साथ–साथ उत्पाद की गुणवत्ता बढ़ाने में भी सहायक रहता है। खेत में बुआई से पूर्व मिट्टी पलटने वाले हल से 3–4 बार गहरी जुताई करनी चाहिए तथा पाटा चलाकर भूमि को भूरभूरी व समतल कर लेना चाहिए। खेत की तैयारी से लगभग एक महीने पहले खेत में अच्छी प्रकार से सड़ी हुई 22–25 टन गोबर की खाद डालनी चाहिए। करेले की फसल के लिए रेतीली दोमट मृदा जिसका पी. एच. 6.0–7.0 हो उपयुक्त रहती है।

उन्नत पौध कैसे तैयार करें?

प्लग ट्रे विधि से करेले की विषाणु रहित पौध तैयार की जा सकती है। कोकोपीट, वर्मीकुलाइट व परलाइट को 3:1:1 के अनुपात या मिट्टी, बालू व अच्छी तरह से सड़ी हुई गोबर की खाद 1:1:1 के अनुपात (आयतन के आधार पर) में मिश्रण बनाकर ट्रे के खानों को भर ले व बीजो की बुआई 1 से.मी. गहराई पर करें। पॉलीथीन विधि से भी करेले की पौध तेयार की जा सकती है। इसके लिए 15 × 10 सें.मी. आकार की पॉलीथीन की थैलियों जिसमे जल निकास की व्यवस्था हेतु सूजे की सहायता से 5–6 स्थानों पर छेद हो उनमें 1:1:1 अनुपात में मिट्टी, बालू व सड़ी हुई गोबर की खाद भर ले। बीज की बुआई लगभग 1 सें.मी. की गहराई पर करके बालू की पतली परत बिछा लेते हैं तथा हजारे की सहायता से पानी लगायें। बीज दर लघभग 4–6 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर रखना चाहिए। इस विधि से पौध 15 जनवरी के आसपास पॉलीहाउस में तैयार की जा सकती है जो लगभग 25–30 दिनों में (लगभग 15 फरवरी) खेत मे रोपाई के लिए तैयार हो जाती है इस प्रकार करेले की 1 महीने अगेती फसल ली जा सकती है। सीधी खेत में बुआई के लिए बुआई का समय फरवरी–मार्च

उपयुक्त होता है। पंक्ति से पंक्ति की दुरी 1.5 मी. तथा पौधे से पौधे की दुरी 0.5 मी. रखनी चाहिए।

संतुलित मात्रा में खाद व उर्वरक प्रयोग

खाद व उर्वरकों का प्रयोग मृदा की जाँच के अनुसार करना चाहिए। इसके लिए निकटतम कृषि विज्ञानं केंद्र या जिला कृषि विभाग की मृदा प्रयोगशाला से मिट्टी की जांच करवा लेनी चाहिए। कच्ची गोबर की खाद का प्रयोग नहीं करना चाहिए क्योंकि इनका प्रयोग करने से मृदा में दीमक का प्रकोप हो जाता है। 15–20 टन सड़ी हुई गोबर की खाद खेत में बुवाई से लगभग 1 महीने पहले मिला देना चाहिए। रासायनिक खादों में 100 कि.ग्रा. नाइट्रोजन 50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 50 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए। नाइट्रोजन की आधी मात्रा तथा फॉस्फोरस पोटाश की पूरी मात्रा खेत की तैयारी के समय मिलानी चाहिए तथा शेष नाइट्रोजन की मात्रा को दो बराबर भागो में बाटकर बुवाई के 30 एवं 45 दिन बाद नालियों में डालकर सिचाई करनी चाहिए।

सिचाई कैसे करें ?

जब भी मृदा मे नमी की कमी हो सिंचाई करनी चाहिये। खेत में पानी का भराव लम्बे समय तक नहीं होना चाहिए। यदि खेत मे ऐसा हो जाता है तो तुरंत जल निकास की व्यवस्था करनी चाहिये। गर्मी के मौसम में उगाई जाने वाली करेले की फसल में 5–7 दिनो के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिये। बूंद–बूंद सिंचाई विधि भी करेले की फसल में इस्तेमाल की जाती है, जिससे न केवल 30–40 प्रतिशत पानी की बचत होती है बल्कि पानी में घुलनसील उर्वरक (एन. पी. के. 19:19:19) भी सिचाई के साथ अच्छी बढ़वार व अधिक उपज लेने के लिए दिये जा सकते है।

खरपतवार नियंत्रण

करेले की फसल में अच्छी बढ़वार एवं अधिक उपज के लिए आरंभिक अवस्था में खरपतवारों का नियंत्रण करना अत्यधिक आवश्यक है। इस अवस्था में खरपतवार करेले से पानी, प्रकाश एवं पोषक तत्वों के लिए प्रतियोगिता करते है। इसके साथ ही साथ विभिन्न प्रकार के हानिकारक कीट व बीमारियों को भी शरण देते है जिससे उपज में भारी गिरावट आ जाती है तथा उपज लगभग 20–80 प्रतिशत तक कम हो सकती है। ये खरपतवार शुरवाती 4–6 सप्ताह तक अधिक नुकसान करते हैं। पहली दो सिंचाई करने के बाद में हल्की निराई गुडाई करके इनको निकाला जा सकता है। रासायनिक खरपतवार नियन्त्रण के लिए पेन्डीमिथेलीन (30 ई.सी.) 400 मि.ली. को 200 ली. पानी में घोलकर प्रति एकड रोपाई से पहले छिड़काव करें।

उन्नत किस्मे एवं संकर किस्मे

- **पूसा दो मौसमीः** फल लगातार ढलाव वाले, मध्यम लंबे, जायद तथा बरसात के मौसम में उपयुक्त, 55–60 दिनों में पहली कटाई, पैदावार 130 क्वि./हे.।
- **पूसा विशेषः** फल मध्यम लंबाई वाले, चमकदार, हरे, जायद मौसम में उपयुक्त, बेल छोटी इसलिए क्षेत्रफल के लिहाज से अधिक फल लगते हैं। 55–60 दिनों में पहली कटाई, पैदावार 150 क्वि./हे.।
- **पूसा औषधिः** करेला की इस किस्म के फल हल्के हरे रंग के एवं औसतन लम्बाई 16.5 सै.मी. होती है। फल में 7–8 लगातार धारियां होती हैं तथा 50 से 55 दिनों में तुड़ाई के लिए तैयार हो जाते हैं। औसत फल का वजन 85 ग्राम है तथा प्रति पौधा औसत फल संख्या 20–25 होती है। इसकी औसत उपज 15 से 19 टन प्रति हेक्टेयर होती है। इसमें नर मादा पुष्प अनुपात 3:1, जो कि व्यवसायिक किस्म पूसा दोमौसमी के 1:9 की तुलना में अधिक होता हैं। अखिल भारतीय समन्वित अनुसंधान परियोजना (सब्जी फसलें) द्वारा इस किस्म को राजस्थान, गुजरात, हरियाणा और दिल्ली प्रदेशों में खेती के लिए अनुमोदित किया गया है।
- **पूसा पूर्वीः** यह किस्म छोटे फल वाली व भरवां व्यंजन बनाने के लिए उपयुक्त है। इसके फल आकर्षक, गहरे हरे रंग वाले, आकार में छोटे (4–5 सें.मी. लम्बे व 3–4 सें.मी. व्यास आकार में) व मोटे होते हैं। इस प्रजाति की उपज 8.8 टन/हेक्टेयर पायी गई हैं। करेले की इस प्रजाति में लवणों एवं फाइटोकेमिकलस की उच्च मात्रा पायी गई हैं। प्रचलित किस्मों के मुकाबले इसके फलों में कम नमी (82.3%) व लवणों की उच्च मात्रा पायी गई हैं जैसे कि केल्सियम, मैगनीज, जिंक व लौह तत्व

43.03, 3.49, 4.99 और 3.2 मि.ग्रा./100 ग्रा. क्रमशः पाया गया हैं। प्रचलित किस्मों के मुकाबले इस किस्म में एन्टीऑक्सीडेन्ट की मात्रा भी अधिक पायी जाती हैं।

- **पूसा रसदारः** यह संरक्षित खेती में अति शीघ्र (41–45 दिन में प्रथम फल तुड़ाई के लिए तैयार) फल देने वाली किस्म हैं। यह किस्म उपज एवं गुणवत्ता में वर्तमान प्रजातियों से बेहतर हैं। इसके फल रसदार, आकर्षक, गहरे हरे रंग वाले, त्रिकोणाकार वांछनीय बिक्री योग्य गुण वाले हैं। फल चिकनी कोमल त्वचा वाले व मांसल होने के कारण उत्पादकों को अत्यधिक स्वीकार्य हैं। कीड़ों से रहित जालीघर में फल का औसत वजन 110 ग्राम व इसकी औसत उपज 4.54 क्वि./हेक्टेयर पायी गई हैं जबकि पॉली हाउस में 4.07 क्वि./हेक्टेयर उपज प्राप्त हो जाती हैं।

- **पूसा हाइब्रिड–1:** फल मध्यम लंबाई व मोटाई वाले, चमकदार, हरे, अचार तथा सुखाने के लिए उपयुक्त। पहली कटाई 55–60 दिनों में, जायद में बुवाई के लिए उपयुक्त, पैदावार 200 क्वि॰/हे॰।

- **पूसा हाईब्रिड–2:** यह संकर प्रजाति अर्द्ध–आर्द्रता सतलज–गंगा एल्यूवियल मैदानों पंजाब, हरियाणा देहली तथा उत्तर प्रदेश में खेती हेतु संस्तुति की गई। 'पूसा श्यामला' के पौधे कॉटे रहित, सीधी शाखाओं वाले तथा नई पत्तियॉ आशिंक रूप से बैंगनी रंग लिए होती है। इसके फल लम्बे, चमकदार, आकर्षक गहरे बैंगनी रंग के, जिनका औसत वजन 80–90 ग्रा. होता है। फलों की पहली तुड़ाई पौध रोपाई के बाद 50–55 दिनों का समय लगता है। इसकी औसत उपज 391.6 क्विं./हे. जो कि पहले से उपलब्ध प्रजाति के. एस.–331 से 12.8: अधिक है। पूसा श्यामला, उत्तरी भारत के मैदानी भागों में पतझड–शरद ऋतु के लिए उपयुक्त है।

- **पूसा हाइब्रिड–4:** यह करेले की प्रथम गायनोसीयस आधारित किस्म है जो भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा विकषित की गई है एवं राज्य की कृषि और बागवानी फसलों की बीज उप–समिति द्वारा वाणिज्यिकी खेती के लिए जारी की गयी है। इस संकर किस्म में मादा पुष्पों की संख्या अधिक होती है और मादाःनर पुष्प 2:1 के अनुपात में होते है। इसके फल गहरे हरे रंग वाले, मध्यम लंबाई व मध्यम मोटाई वाले (औसत फल लम्बाई 16.0 सें. मी. एवं मोटाई 5.5 से 6.5 सें.मी) होते है। इसके फल 5 से 6 असंतत संकीर्ण धारियों युक्त होते है जिनकी प्रथम तुड़ाई बुवाई के 45–50 दिनों बाद की जाती है। औसत फल वजन 60 ग्र. होता है तथा इस किस्म की औसत उपज 22.26 टन प्रति हेक्टेयर है।

गर्मी के मौसम में करेले की फसल में विशेष क्रियाए

- मृदा की गहरी जुताई करनी चाहिए जिससे हानिकारक कीटो के लार्वा भूमि की सतह पर आ जाते है। ऐसे कीटो को पक्षी अपने भोजन के रूप में खा जाते है जिनसे गर्मी में करेले की फसल में में इनका प्रकोप भी कम हो जाता है।

- फल मक्खी के रोकथाम के लिए मीठे जहर, जो 50 मिली लीटर मैलाथियान का आधा कि.ग्रा. चीनी या गुड़ के साथ मिला कर 50 लीटर पानी में बनाये गए घोल का प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें। फल मक्खी के नरों को आकर्षित करने के लिए ''मिथाइल यूजीनोल'' गन्ध पाश का प्रयोग भी किया जा सकता है।

- अधिक खारे पानी का प्रयोग विषेषतः ड्रिप–सिंचाई के लिए नहीं करना चाहिए।

- अगर सिंचाई का पानी अधिक खारा हो तो इसको सहन करने वाली फसलें जैसे पालक एवं विलायती पालक की खेती करना अधिक लाभप्रद रहता है।

- भूमि और जलवायु के अनुकूल ही किस्मों का चयन करना चाहिए।

- रासायनिक कीटनाशको, उर्वरको एवं खरपतवारनाशी आदि विश्वस्त स्रोत से ही खरीदें।

- गोबर की खाद या कम्पोस्ट, सुपर फॉस्फेट व म्युरेट ऑफ पोटाश खेत तैयार करते समय मिट्टी में अच्छी तरह से मिला देना चाहिए।

- बीजाई से पूर्व बीज उपचार अवश्य करना चाहिए।

- रोगों और कीड़ों से ग्रसित पौधों को उखाड़कर नष्ट कर दें।
- नत्रजन खाद डालने के बाद सिंचाई अवश्य कर दें।
- खाद पौधे के पत्तों या अन्य भाग पर नहीं पड़नी चाहिए।
- कीटनाशी तथा फफूँदनाशी दवाइयों का घोल आवश्यकता होने पर ही बनायें।
- आपस में अनुकूलता के आधार पर ही दवाइयों को मिलायें।
- दवाई के घोल को प्लास्टिक या शीषे के बर्तन में ही घोलें।
- रसायनों के प्रयोग के उपरांत आवश्यक प्रतिक्षा अवधि के बाद ही तुड़ाई करें ताकि कटाई उपरांत उत्पादन में रसायन का अवशेष न रहे।
- रसायनों का कम से कम प्रयोग करें तथा जैविक विकल्पों पर बल दें।
- तुड़ाई सावधानी से एवं उचित समय पर करें तथा इस बात का ध्यान रखें कि न तो पौधे को और न ही उत्पादन को हानि पहुंचे।

प्रमुख रोग व कीट एंव नियंत्रण

प्रमुख रोग

- **मृदु रोमिल आसिताः** पत्तियों के उपरी भाग पर पीले धब्बे तथा निचले भाग पर बैंगनी रंग के धब्बे दिखाई देते हैं।

निदानः इसके रोकथाम के लिए डाईथेन जेड– 78 के 0.2 से 0.3 प्रतिशत (2–3 ग्रा. प्रति लीटर) का घोल बनाकर छिड़काव करे।

- **चूर्णित आसिताः** पत्तियों की निचली सतह पर सफेद धब्बे दिखाई देते है पत्तियाँ पिली पड़ जाती हैं तथा सूख जाती हैं।

निदानः 0.03 प्रतिशत केराथेन का साप्ताहिक छिड़काव करे।

- **विषाणु रोगः** मुख्य रूप से एफिड एवं सफेद मक्खियों द्वारा फैलता है, पत्तियों पर पीले धब्बे पड़ना, सिकुड़ना, पीली हो कर सूख जाना तथा फलों पर हल्की से लेकर मस्सेदार वृद्धि दिखाई देना, छोटे एवं टेड़े मेढे होना आदि प्रमुख लक्षणों में से हैं।

निदानः रोग के नियंत्राण के लिये 0.03 प्रतिशत मेटासिस्टोक्स या 0.02 प्रतिशत रोगर का छिड़काव करे।

प्रमुख कीट

- **रेड पम्पकिन बीटलः** कीट के शिशु व वयस्क दोनों ही फसल को हानि पहुंचाते हैं, वयस्क कीट पौधों के पत्ते में टेढ़े–मेढ़े छेद करते हैं जबकि शिशु पौधों की जड़ों, भूमिगत तने व भूमि से सटे फलों तथा पत्तों को नुकसान पहुंचाते हैं।

निदानः इसके रोकथाम के लिए कार्बेरिल 50 डब्ल्यू.पी. 2 ग्राम प्रति लीटर या एमामेक्टिन बैंजोएट 5 एस.जी. 1 ग्राम प्रति 2 लीटर या इन्डोक्साकार्ब 14.5 एस.सी. 1 मि.ली. प्रति 2 लीटर का घोल बना कर छिड़काव करे।

- **फल मक्खीः** यह फलों को छेद कर अंडे देती हैं जिनसे निकले मैगट फल के भीतर ही बढते रहते हैं और फल के गुदे से अपना आहार प्राप्त करते हैं, कीट ग्रस्त फल विकृत हो जाते हैं या सड़ जाते हैं।

निदानः रोकथाम के लिए मैलाथियान 0.02 प्रतिशत (200 मिली ग्रा. प्रति लीटर) का घोल बना कर छिड़काव करें। मक्खियों को आकर्षित कर मारने के लिए मीठे जहर, जो 50 मिली लीटर मैलाथियान का आधा कि.ग्रा. चीनी या गुड़ के साथ मिला कर 50 लीटर पानी में बनाये गए घोल का प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें। फल मक्खी के नरों को आकर्शित करने के लिए ''मिथाइल यूजीनोल'' गन्ध पाश का प्रयोग भी किया जा सकता है।

प्याज की वैज्ञानिक खेती

सबीना इस्लाम एवं बी. एस. तोमर
शाकीय विज्ञान संभाग
भा.कृ.अनु.प–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

प्याज हमारे देश में उगाई जाने वाली महत्वपूर्ण सब्जियों फसलोंमें से एक है। मुख्य आर्थिक हिस्सा शल्ककंद है, हालांकि, हरी प्याज भी पोषण और फाइटोकेमिकल उपलब्धाता के कारण लोकप्रियता प्राप्त कर रहा है। अधिकांश भारतीय व्यंजन प्याज के बिना अधूरे हैं। इसे कई रूपों में खाया जाता है, सलाद या चटनी के रूप में, मसाले के रूप में या सब्जी के रूप में पकाया जाता है। इसे अचार, चटनी या सॉस के रूप में संरक्षित करके भी उपयोग में लाया जाता है। निर्जलित प्याज मुख्य रूप से दूर स्थानों पर स्थित सैन्य लोगों के लिए उपयोग किया जाता है जहां इसकी उच्च मात्रा के कारण ताजा प्याज का परिवहन मुश्किल होता है। हमारे देश में वर्ष 2018–19 में प्याज 1.29 मिलियन हेक्टेयर में उगाया गया था और उत्पादन 23.26 मिलियन टन हुआ है। प्रति हेक्टेयर उत्पादन लगभग 18.1 टन है, जो कि विमोचित किस्मों की औसत उपज क्षमता से काफी कम है। वैज्ञानिक तरीके से खेती करके इस अंतर को कम किया जा सकता है।

खेती का मौसमः भारत में प्याज तीन अलग–अलग मौसमों में उगाया जाता हैः

रबी या सर्दीः अधिकांश प्याज सर्दी या रबी मौसम में उगाए जाते हैं। जगह की भौगोलिक स्थिति के आधार पर फसल की अवधि अक्टूबर–नवंबर से अप्रैल–मई तक होती है। फसल की वृद्धि, शल्ककंद निर्माण और विकास तुलनात्मक रूप से ठंडे दिन और रात के तापमान में होता है। गर्मी के आगमन के साथ फसल पक जाती है। फसल की परिपक्वता को पत्ती के सूखने और गर्दन के गिरने से आंका जाता है। फसल अच्छी गुणवत्ता की होती है और उचित ढंग से शल्ककंदो को 5–6 महीने तक भण्डारण किया जा सकता है।

खरीफ या मानसून फसलः देश के कुछ चुनिंदा स्थानों पर बारिश के मौसम में भी प्याज उगाया जाता है। मानसून के मौसम में प्याज की कुछ ही किस्में सफलतापूर्वक उगाई जा सकती हैं। फसल का मौसम जून–जुलाई से अक्टूबर/नवंबर–दिसंबर तक रहता है। फसल की खेती का तरीका भी जगह–जगह पर अलग–अलग होता है। कुछ स्थानों पर पौध रोपण सामग्री के रूप में उपयोग किया जाता है जबकि अन्य स्थानों पर सेट (1.8–2.5 सेमी व्यास के छोटे बल्ब) रोपण सामग्री के रूप में उपयोग किया जाता है। उच्च तापमान और आर्द्रता की स्थिति के कारण खेती कठिन है, लेकिन बाजार में प्याज की आपूर्ति में कमी के कारण फसल से बेहतर लाभ मिलता है क्योंकि रबी प्याज अक्टूबर–नवंबर के दौरान अंकुरित होना शुरू हो जाता है और पसंद नहीं किया जाता है। कटाई योग्य परिपक्वता पर भी फसल की वृद्धि रुकती नहीं है ,और फसल बल्ब के विकास के साथ–साथ अपनी वानस्पतिक वृद्धि जारी रखती है। परिपक्वता को बल्ब के आकार से आंका जाता है, जो दिखाई देता है क्योंकि परिपक्व बल्बों के 2–3 से अधिक बल्ब विकसित होने पर मिट्टी के ऊपर रहते हैं। इस फसल का तुरंत विपणन करने की आवश्यकता है क्योंकि इसे अधिक समय तक भंडार नहीं किया जा सकता है।

अगेती खरीफ/पछेती खरीफः अगेती खरीफ फसल मार्च/अप्रैल से अगस्त/सितंबर तक उगाई जाती है। इसका खेती ज्यादातर देश के दक्षिणी भाग में पालन किया जाता है जहां तापमान तुलनात्मक रूप से कम होता है। देर से खरीफ की फसल सितंबर/अक्टूबर से फरवरी/मार्च तक उगाई जाती है। महाराष्ट्र और कर्नाटक के कुछ हिस्सों में इस फसल मौसम का पालन किया जाता है। इस फसल के मौसम के लिए फूल के डंठल दिखना एक बड़ी

समस्या है। सरकारी संस्थानों और निजी बीज कंपनियों द्वारा प्याज की कई उच्च उपज वाली किस्में जारी की गई हैं, लेकिन सभी किस्में तीनों मौसमों में खेती के लिए उपयुक्त नहीं हैं। इसलिए, व्यावसायिक प्याज की खेती करने से पहले प्याज की किस्मों, उनकी विषेषताओं और बढ़ते मौसम के बारे में पूरी जानकारी आवश्यक है। विभिन्न संस्थानों से जारी प्याज की किस्में:

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली

पूसा रिद्धिः इस किस्म के बल्ब कॉम्पैक्ट, चपटे ग्लोब नुमा और गहरे लाल रंग के होते हैं। औसत बल्ब का वजन 70.0 – 100.0 ग्रा. के बीच होता है। यह किस्म भंडारण के लिए उपयुक्त है, और मध्य–पूर्व के देशों में निर्यात की जाती है। औसत उपज 31.66 टन/हेक्टेयर है। यह किस्म रबी की फसल के लिए उपयुक्त है।

पूसा सोनाः इस किस्म के कंद कॉम्पैक्ट और क्रीमी पीले रंग के होते हैं। औसत बल्ब का वजन 70.0 – 135.0 ग्रा., उपज क्षमता 33.0–35.0 टन/हेक्टेयर से होता है। यह किस्म कम टीएसएस (10.0 ± 2 डिग्री ब्रिक्स) के साथ ताजा खाने के लिए उपयुक्त है। रोपाई के 125 – 135 दिनों के बाद बल्ब कटाई के लिए तैयार हो जाते हैं। यूरोप और अमेरिका में निर्यात के लिए उपयुक्त होते हैं। किस्म रबी की फसल के लिए उपयुक्त है।

पूसा शोभाः बल्ब कॉम्पैक्ट, फ्लैट ग्लोब और भूरे रंग के होते हैं। औसत बल्ब का वजन 70.0 – 100.0 ग्रा. के बीच होता है। बल्बों में उच्च टीएसएस (17± 2 डिग्री ब्रिक्स) होता है। यह किस्म भंडारण, सुखाने, प्रसंस्करण और निर्यात के लिए उपयुक्त है। औसत उपज 25.04 टन/हेक्टेयर है। किस्म रबी फसल के लिए उपयुक्त है।

पूसा रेडः औसत बल्ब भार 70–90 ग्रा., गोलाकार, कम तीखा एबं टीएसएस 12–15 डिग्री ब्रिक्स। रोपाई के 125 – 140 दिन बाद पकती है। बल्बों की औसत उपज 25–30 टन/हेक्टेयर होती है। यह किस्म रबी की फसल के लिए उपयुक्त है। किस्म में भण्ड़ारण की गुणवत्ता अच्छी होती है।

पूसा माधवीः बल्ब मध्यम से बड़े, भूरे लाल रंग के, टीएसएस 12–15 डिग्री ब्रिक्स। 130–135 दिनों में पक जाती है। रबी मौसम के लिए उपयुक्त है । बल्बों की औसत उपज 30 टन/हेक्टेयर होती है । किस्म में भण्ड़ारण की गुणवत्ता अच्छी होती है।

पूसा व्हाइट राउंडः मध्यम से बड़े, आकर्षक गोल आकार के बल्ब। हरे प्याज के उत्पादन के लिए उपयुक्त। टीएसएस मध्यम है, 13–14 डिग्री ब्रिक्स। पछेती खरीफ और रबी मौसम के लिए उपयुक्त। 125–130 दिनों में पक जाती है। बल्बों की औसत उपज 28–30 टन/हेक्टेयर होती है । यह प्रसंस्करण और निर्जलीकरण के लिए उपयुक्त है।

पूसा व्हाइट फ्लैटः मध्यम से बड़े, चपटे आकार के बल्ब। हरी प्याज उत्पादन के लिए उपयुक्त। टीएसएस मध्यम है, 12–14 डिग्री ब्रिक्स। पछेती खरीफ और रबी मौसम के लिए उपयुक्त। 120–130 दिनों में पक जाती है। बल्बों की औसत उपज 25–30 टनध्हेक्टेयर होती है । यह प्रसंस्करण और निर्जलीकरण के लिए उपयुक्त है।

प्याज और लहसुन अनुसंधान निदेशालय, पुणे, महाराष्ट्र

भीमा डाक्र रेडः बल्ब आकर्षक गहरे लाल रंग के होते हैं। छत्तीसगढ़, दिल्ली, गुजरात, हरियाणा, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, ओडिशा, पंजाब, राजस्थान और तमिलनाडु में खरीफ मौसम में उगाने के लिए उपयुक्त है। रोपाई के 95–100 दिनों बाद फसल पक जाती है। औसत उपज क्षमता 20–22 टन/हेक्टेयर है।

भीमा लाइट रेडः बल्ब हल्के लाल रंग का होता है। कर्नाटक और तमिलनाडु में रबी मौसम में उगाने के लिए उपयुक्त है। औसत बल्ब का वजन लगभग 70.0 ग्रा. और उपज क्षमता 38.5 टन/हेक्टेयर होता है। रोपाई के 115 दिनों बाद पक जाती है। यह किस्म अच्छी तरह से स्टोर होती है।

भीमा रेडः महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश में रबी के मौसम के लिए और दिल्ली, गुजरात, हरियाणा, कर्नाटक, महाराष्ट्र, पंजाब, राजस्थान और तमिलनाडु में खरीफ मौसम के लिए उपयुक्त है। इसे पछेती खरीफ में भी उगाया जा सकता है।

खरीफ के दौरान रोपाई के 105–110 दिनों के बाद और पछेती खरीफ और रबी मौसम में रोपाई के 110–120 दिनों के बाद तैयार हो जाता है। खरीफ मौसम में औसत विपणन योग्य उपज 19–21 टन/हेक्टेयर है पछेती खरीफ मौसम में 48–52 टन/हेक्टेयर है और रबी मौसम में 30–32 टन/हेक्टेयर है। रबी में इसे 3 महीने तक भण्ड़ारण किया जा सकता है।

भीमा सुपरः छत्तीसगढ़, दिल्ली, गुजरात, हरियाणा, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, ओडिशा, पंजाब, राजस्थान और तमिलनाडु में खरीफ मौसम के लिए उपयुक्त। इसे पछेती खरीफ में भी उगाया जा सकता है। खरीफ में औसत उपज 20 – 22 टन/हेक्टेयर और पछेती खरीफ में 40 – 45 टन/हेक्टेयर है। खरीफ में रोपाई के 100–105 दिनों के भीतर और पछेती खरीफ में रोपाई के 110–120 दिनों के बाद बल्ब परिपक्व हो जाते हैं।

भीमा राजः महाराष्ट्र, कर्नाटक और गुजरात राज्यों में खरीफ और पछेती खरीफ मौसम के लिए उपयुक्त। राजस्थान, गुजरात, हरियाणा और दिल्ली राज्यों में तत्काल बाजार के लिए रबी में इसकी खेती की जा सकती है। यह किस्म रोपाई के 120–125 दिनों के भीतर पक जाती है, औसत उपज 25–30 टन/हेक्टेयर के बीच होती है।

भीमा किरणः महाराष्ट्र, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, दिल्ली, यूपी, हरियाणा, बिहार और पंजाब राज्यों में रबी के मौसम के लिए उपयुक्त है। यह किस्म रोपाई के 130 दिनों के भीतर पक जाती है, और औसत बिक्री योग्य उपज 41.5 टन/हेक्टेयर तक होती है। इस किस्म को 5–6 महीने तक भण्ड़ारण किया जा सकता है।

भीमा शक्तिः महाराष्ट्र, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, दिल्ली, यूपी, हरियाणा, बिहार, पंजाब, राजस्थान, गुजरात, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़ और उड़ीसा के लिए पछेती खरीफ और रबी मौसम के लिए उपयुक्त। पछेती खरीफ और रबी मौसम के दौरान रोपाई के 130 दिनों में बल्ब परिपक्व हो जाते हैं। पछेती खरीफ के दौरान बिक्री योग्य उपज 45.9 टन/हेक्टेयर और रबी के दौरान 42.7 टन/हेक्टेयर है। इस किस्म को 5–6 महीने तक भण्ड़ारण किया जा सकता है। भीमा श्वेताः बल्ब सफेद रंग के होते हैं। छत्तीसगढ़, गुजरात, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, ओडिशा, राजस्थान और तमिलनाडु में रबी और खरीफ मौसम के लिए उपयुक्त है। टीएसएस लगभग 11–12 डिग्री ब्रिक्स है और यह रोपाई के 110–120 दिनों के भीतर परिपक्व हो जाता है। इसे 3 महीने तक भण्ड़ारण किया जा सकता है। खरीफ मौसम के दौरान औसत विपणन योग्य उपज 18 – 20 टन/हेक्टेयर और रबी में 26–30 टन/हेक्टेयर है।

भीमा शुभ्राः बल्ब सफेद रंग के होते हैं। महाराष्ट्र में खरीफ और पछेती खरीफ दोनों मौसमों के लिए उपयुक्त। छत्तीसगढ़, गुजरात, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, ओडिशा, राजस्थान और तमिलनाडु में केवल खरीफ मौसम के लिए उपयुक्त है। यह खरीफ में रोपाई के 110–115 दिनों में और पछेती खरीफ में 120–130 दिनों के भीतर पक जाती है। टीएसएस 10–12 डिग्री ब्रिक्स है। इसमें मध्यम भंडारण क्षमता है । खरीफ के दौरान औसत विपणन योग्य उपज 18 – 20 टन/हेक्टेयर और पछेती खरीफ के दौरान 36–42 टन/हेक्टेयर है।

भीमा सफेदः छत्तीसगढ़, गुजरात, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, राजस्थान और तमिलनाडु में रबी के मौसम में खेती के लिए उपयुक्त है। यह एक मध्यम परिपक्व (110–120 दिन) किस्म है जिसमें सफेद रंग के 70–80 ग्रा. के शल्ककंद होते हैं। इसकी औसत उपज 18.5 टन/हेक्टेयर है। इसमें डबल्स और बोल्टर्स कम बनते हैं।

आवश्यक जलवायुः प्याज मूल रूप से ठंड के मौसम की फसल है। मध्यम जलवायु में फसल सबसे अच्छा प्रदर्शन करती है। पत्ती वृद्धि के लिए उपयुक्त तापमान 13–24 °C है, जबकि बल्ब विभेदन और विकास तुलनात्मक रूप से उच्च तापमान पर होता है (16–25°C)। लगभग 70% सापेक्ष आर्द्रता अच्छी वृद्धि के लिए आदर्श मानी जाती है। 650 – 750 मिमी की औसत वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों में फसल सबसे अच्छा प्रदर्शन करती है।

मिट्टीः प्याज एक उथली जड़ वाली फसल है, इसलिए पर्याप्त कार्बनिक पदार्थों वाली बलुई दोमट मिट्टी प्याज के बल्ब के विकास के लिए सबसे अच्छी मानी जाती है।

रेतीली या भारी मिट्टी में बल्ब का उचित विकास नहीं होते है। फसल जल भराव के प्रति संवेदनशील है, इसलिए पर्याप्त जल निकासी सुनिश्चित की जानी चाहिए। बरसात के मौसम में प्याज को उठी हुई क्यारियों पर उगाने की सलाह दी जाती है। उपयुक्त पीएच 6.0–7.5 है।

बुवाई/रोपण का समयः विभिन्न उत्पादक क्षेत्रों के लिए बुवाई और रोपाई का समय महत्वपूर्ण और विशिष्ट है। उत्तर भारतीय मैदानी क्षेत्रों में, यदि रोपाई के बाद रबी की फसल में ठंढ का अनुभव होता है, तो अधिक फूल वाले डंठल होंगे और इससे गुणवत्ता कम हो जाती है। अतः बुवाई को इस प्रकार समायोजित करना चाहिए कि पाला पड़ने की संभावना समाप्त होने पर 45–50 दिन पुरानी पौध की रोपाई की जा सके। इसी तरह, 35 डिग्री सेल्सियस से ऊपर मिट्टी का तापमान खरीफ फसल में बीज के अंकुरण और अंकुर स्थापना पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। उच्च तापमान और उच्च आर्द्रता बीमारियां फैलती हैं और यह बीज के अंकुरण को प्रभावित करता है और पौधे मर जाते हैं । इसलिए, एक या दो मानसून की बारिश के बाद बुवाई की सिफारिश की जाती है।

बीज दरः 10 ग्रा. बीज में लगभग 2200–2500 बीज होते हैं और मानक अंकुरण प्रतिशत 70% है। एक हेक्टेयर में पौध उगाने के लिए लगभग 8–10 किलोग्राम बीज की आवश्यकता होती है।

पौध की तैयारीः हमेशा नर्सरी में पौध उगाने की सलाह दी जाती है। फसल की खेती पौध रोपण के माध्यम से की जाती है। यह बीज दर को कम करता है, देखभाल में आसान होने के साथ–साथ रोगों और कीटों को नियंत्रित

भारत के विभिन्न हिस्सों में बुवाई, रोपाई एवं खुदाई का समय इस प्रकार हैः

	मौसम	**बुवाई**	**रोपाई**	**खुदाई**
उत्तर भारतीय मैदान (पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, राजस्थान, यूपी, बिहार वाले राज्य)	रबी फसल	अक्टूबर–नवंबर	दिसंबर–जनवरी	मई–जून
	खरीफ फसल (पौधे उगाए गए)	जून–जुलाई	जुलाई–अगस्त	अक्टूबर–दिसंबर
	(सेट)	जनवरी–फरवरी	अप्रैल–मई (सेट कटाई और भंडारण करें)	
			जुलाई–अगस्त (सेट रोपण करें)	अक्टूबर–दिसंबर
पश्चिम भारतीय मैदान (महाराष्ट्र, गुजरात और कर्नाटक के कुछ हिस्सों)	रबी फसल	अक्टूबर–नवंबर	दिसंबर–जनवरी	अप्रैल–मई
	अगेती खरीफ	फरवरी–मार्च	अप्रैल–मई	अगस्त–सितंबर
	खरीफ	मई–जून	जुलाई–अगस्त	अक्टूबर–दिसंबर
	देर से खरीफ	अगस्त–सितंबर–	अक्टूबर–नवंबर	जनवरी–मार्च
दक्षिण भारतीय मैदान (तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश और कर्नाटक के कुछ हिस्सों)	रबी फसल	सितंबर–अक्टूबर	नवंबर–दिसंबर	मार्च–अप्रैल
	अगेती खरीफ	फरवरी–अप्रैल	अप्रैल–जून	जुलाई–सितंबर
	खरीफ	मई–जून	जुलाई–अगस्त	अक्टूबर–नवंबर
पूर्वी भारतीय मैदान (पश्चिम बंगाल, उड़ीसा और बिहार के कुछ हिस्से)	रबी फसल	अक्टूबर–नवंबर	नवंबर–दिसंबर	मार्च–अप्रैल
	खरीफ	जुलाई–अगस्त	अगस्त–सितंबर	नवंबर–दिसंबर
पहाड़ी क्षेत्र	रबी	सितंबर–अक्टूबर	अक्टूबर–नवंबर	जून–जुलाई
	गर्मी	नवंबर–दिसंबर	फरवरी–मार्च	अगस्त–अक्टूबर

करने में भी आसान है। लगभग 500 मी^{2} की नर्सरी एक हेक्टेयर (10,000 मी^{2}) में पौध उगाने के लिए पर्याप्त है। नर्सरी धूप वाली जगहों पर होनी चाहिए जिसमें पर्याप्त सिंचाई और जल निकासी की व्यवस्था हो। समृद्ध, उपजाऊ, बलुई दोमट, मृदा जनित रोगों से मुक्त मिट्टी होनी चाहिए। खरीफ मौसम के दौरान, नर्सरी में दिन के उच्च तापमान अवधि (सुबह 10.00 बजे से दोपहर 4.00 बजे) के दौरान छाया प्रदान करने के लिए पर्याप्त प्रावधान किए जाने चाहिए।

नर्सरी की क्यारी 15–20 सें.मी. उठी हुई, 100–120 सें. मी. चौड़ाई और सुविधानुसार लंबाई होनी चाहिए। सिंचाई, जल निकासी और अन्य नर्सरी कार्यों जैसे निराई, गुड़ाई आदि की सुविधा के लिए दो क्यारियों के बीच की दूरी 30–45 सेमी होनी चाहिए।

बुवाई से पहले बीज को 2 ग्रा. प्रति किलो बाविस्टिन से उपचारित करें। बीजों को 5.0–7.0 सेंटीमीटर दूरी की लाइन में बोना चाहिए। बुवाई के बाद, बीज को खरीफ मौसम में हल्की मिट्टी से और सर्दियों के मौसम में छनी हुई गोबर का खाद से ढकना चाहिए। बीज को ढकने के बाद क्यारियों को सूखी घास से ढक देना चाहिए। रासायनिक छिड़काव से सूखी घास इस्तेमाल नहीं की जाती है क्योंकि यह अंकुरण और अंकुर के अस्तित्व को प्रभावित करती है। शाम को रबी की नर्सरी में और खरीफ की फसल में दो या तीन बार छिड़काव करके पानी देना चाहिए।

खरीफ नर्सरी में 4–5 दिनों में और रबी नर्सरी में 7–10 दिनों में बीज अंकुरित हो जाते हैं। जैसे ही अंकुर लगभग 5–7 मि.मी. लंबे होते हैं, सूखी घास को हटा दिया जाना चाहिए। पौधों को रिडोमिल 2 मि.ली./ली. के घोल में भीगाना चाहिए। फसल की अच्छी वृद्धि सुनिश्चित करने के लिए समय पर निराई और गुड़ाई करें।

ह्यूमिक एसिड 2.5 मि.ली./ली. का छिड़काव पौध की बेहतर वृद्धि में मदद करता है। एन.पी.के. घोल (19:19:19)/ 2.5–3.0 ग्राम/ली. स्टिकर के साथ छिड़काव करने से भी पौधे की वृद्धि होती है।

खेत की तैयारी और पौध रोपाईः खेत की अच्छी तरह जुताई कर देनी चाहिए। यह पिछली फसल से ठूंठों और खरपतवारों को हटाने में मदद करता है। खेत से सटे खरपतवारों को भी हटा देना चाहिए क्योंकि वे रोगों और कीटों के वैकल्पिक मेजबान के रूप में काम करते हैं। खरीफ के दौरान, फसल को 1.0–1.25 मी. चौड़ाई के उठाए गए क्यारियों में रोपाई किया जाता है जबकि अन्य मौसम में समतल क्यारियों में रोपण किया जाता है। कुछ इलाकों में असमान सिंचाई और पानी के ठहराव से बचने के लिए क्यारियों को ठीक से समतल किया जाना चाहिए। अंतिम जुताई के दौरान जैविक पदार्थ की अनुशंसित मात्रा और रासायनिक उर्वरक की मूल मात्रा डालें।

नर्सरी से उखाड़ने से पहले हल्की सिंचाई करनी पड़ती है ताकि आसानी से उखाड़ा जा सके। पौध को उखाड़कर सुविधाजनक आकार के बंडलों में बांधा जाता है और रोपाई से पहले 2 घंटे के लिए रिडोमिल घोल 2 ग्रा./ली. में डुबोया जाता है।

दूरीः आदर्श दूरी 15 सेमी × 10 सेमी है, हालांकि खरीफ मौसम के दौरान इसे 12 सेमी × 7 सेमी तक घटाया जा सकता है।

रोपाई के बाद, प्री–इमर्जेंट हर्बिसाइड्स पेंडीमेथालिन 30 ईसी 3.5 –4.0 मिली/लीटर का छिड़काव करें, और उसके बाद बाढ़ सिंचाई करें।

पोषणः प्याज एक सतही जड़ वाली फसल है और मिट्टी की गहरी परत से पोषक तत्वों का उपयोग नहीं कर सकती है। पोषक तत्वों का अनुप्रयोग पूर्ववर्ती फसल और लागू पोषक तत्वों, बढ़ने के मौसम, उपलब्ध नमी की मात्रा और मिट्टी की स्थिति पर निर्भर करता है। प्याज और लहसुन अनुसंधान निदेशालय, पुणे में किए गए अध्ययन ने सुझाव दिया कि खरीफ फसल (25–30 टन/हेक्टेयर की उपज क्षमता) में लगभग 15.0 टन/हेक्टेयर एफवाईएम, 75.0 किलोग्राम नाइट्रोजन, 40.0 किलोग्राम फॉस्फोरस और 40.0 किलोग्राम पोटाश/हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। पछेती खरीफ और रबी फसल में (40.0–50.0 टन/हेक्टेयर की उपज क्षमता) 15.0 टन/हेक्टेयर गोबर का खाद, 110 किलोग्राम नाइट्रोजन, 40.0 किलोग्राम फॉस्फोरस और 60.0 किलोग्राम/हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। पूर्ण गोबर

की खाद, फॉस्फोरस, पोटाशियम और 1/3 नत्रजन अंतिम जुताई के समय डालें और बाकी नत्रजन रोपाई के 30 और 45 दिन बाद दें।

बेहतर उपज के लिए मिट्टी में आवेदन के अलावा पानी में घुलनशील एनपीके उर्वरक (20:20:20 या 19:19:19) / 5 ग्रा./लीटर स्टिकर के साथ रोपाई के 30, 45 और 60 दिनों के बाद छिड़काव करने की सिफारिश की जाती है। सल्फर 15–25 किग्रा/हेक्टेयर भी बल्ब की गुणवत्ता में सुधार करती है। इसका उपयोग अंतिम भूमि की तैयारी के दौरान किया जाना चाहिए।

खरपतवार नियंत्रणः खरपतवार प्याज की खेती के लिए गंभीर खतरा पैदा करते हैं क्योंकि इसकी जड़ें उथली होती हैं और विकास सीधा होता है। पेंडीमेथालिन 30 ईसी 3.5–4.0 मिली/हेक्टेयर को रोपाई के तुरंत बाद छिड़काव करना चाहिए और फिर बाढ़ सिंचाई का पालन करना चाहिए। रोपाई के 45–90 दिनों के बीच 2–3 हाथ से निराई–गुड़ाई करने से खरपतवारों का प्रभावी नियंत्रण होता है।

सिंचाई प्रबंधनः पानी की आवश्यकता जलवायु की स्थिति, उपलब्ध मिट्टी की नमी, फसल की उम्र और सिंचाई विधि पर निर्भर करती है। रोपाई के बाद फसलों की तुरंत सिंचाई कर देनी चाहिए। खरीफ मौसम के दौरान, यदि बारिश नहीं होती है और स्थापना के प्रारंभिक चरण में तापमान काफी अधिक (>35 डिग्री सेल्सियस) होता है, तो मिट्टी के तापमान को कम करने और मुख्य खेत में अंकुर स्थापना की सुविधा के लिए 3–5 दिनों के अंतराल पर लगातार सिंचाई की आवश्यकता होती है। रबी की फसल में यदि रोपाई के बाद पाला पड़ने की संभावना हो तो फसल को बोल्टिंग से बचाने के लिए सिंचाई करनी चाहिए। फसलोंको बार–बार हल्की सिंचाई की आवश्यकता होती है और भारी सिंचाई से बचना चाहिए। सामान्यतः खरीफ फसल में 5–10, पछेती खरीफ में 10–12 और रबी फसल में 12–15 सिंचाई की आवश्यकता होती है। ड्रिप सिंचाई पद्धति से पानी की बचत के अलावा बेहतर गुणवत्ता वाले बल्बों की अधिक पैदावार होती है। दो उत्सर्जक के बीच की दूरी लगभग 30–50 सेमी होनी चाहिए और निर्वहन प्रवाह दर 4 लीटर/घंटा होनी चाहिए। कटाई से 10–15 दिन पहले सिंचाई बंद कर देनी चाहिए।

रोग, कीट एवं उनको निदान

आर्द गलन (डम्पिंग ऑफ): प्याज की नर्सरी में यह एक प्रमुख रोग है। विषेष रूप से यह रोग उच्च तापमान और आर्द्रता की स्थिति वाले क्षेत्रों में होता है। पौधे पंक्ति के मध्य या किनारे से सूखने और मरने लगते हैं और दोनों तरफ फैल जाते हैं।

प्रबंधः

- ❖ जब मिट्टी का तापमान काफी अधिक हो तो नर्सरी में पानी न डालें।
- ❖ जब तापमान अधिक हो (>35°C), नर्सरी की मिट्टी को ठंडा रखने के लिए दिन में 3–4 बार पानी दें।
- ❖ एक बार जब कोई क्यारी संक्रमित हो जाए तो उस क्यारी से दूसरे क्यारी में पानी का स्थानांतरण रोक दें।
- ❖ जड़ क्षेत्र के पास मिट्टी के साथ मिश्रित ट्राइकोडर्मा लगाएं।
- ❖ बाविस्टिन 2 ग्रा. प्रति लीटर की दर से 3–5 दिनों के अंतराल पर डालें। 20–25 ग्राम डीएपी और पोटाश को 1 किलो मिट्टी में मिलाकर 3–4 ग्राम बाविस्टिन मिलाकर जड़ क्षेत्र के पास लगाएं।

एन्थ्रक्नोजः यह प्याज की उभरती हुई बीमारी है, खासकर खरीफ की फसल में। जलभराव और बारिश के छींटे पड़ने से रोग बढ़ जाता है। इसके लक्षण पहले पत्तों के ब्लेड पर हल्के पीले, पानी से लथपथ अंडाकार धब्बेदार से दिखाई देते हैं। प्रभावित पत्तियाँ नीचे गिरती हैं और अंत में मुरझा जाती हैं।

प्रबंधः

- ❖ पर्याप्त जल निकासी सुनिश्चित करें, और जलभराव से बचें।
- ❖ बेनोमाइल 200 ग्रा./100 ली. पानी की दर से मिट्टी

का उपचार करें।

❖ मैन्कोजेब 2.5 ग्रा./ली. का छिड़काव स्टिकर के साथ करें।

बैंगनी धब्बा/स्टेमफिलियम ब्लाइट कॉम्प्लेक्सः पत्तियों के बीच में छोटे पीले से नारंगी रंग के धब्बे विकसित होते हैं ।धब्बे एक साथ विलीन हो जाते हैं, पीले प्रभामंडल से ढके होते हैं। धब्बे अंततः पूरी पत्तियों को ढक लेते हैं।

प्रबंधः

❖ मैंकोजेब 2.5 ग्रा./ली. स्टीकर के साथ स्प्रे करें।

❖ स्टीकर के साथ ट्राईसाइक्लाजोल या हेक्साकोनाजोल या प्रोपिकोनाजोल 1 ग्राम/लीटर का छिड़काव रोपाई के 30 दिन बाद या रोग प्रकट होते ही 10–15 दिनों के अंतराल पर करें।

थ्रिप्सः यह प्याज का प्रमुख कीट है। इसका संक्रमण पत्तियों पर सफेद या चांदी के धब्बे की उपस्थिति से चिह्नित होता है।

प्रबंधः

❖ खेत में नीले स्टिकी ट्रैप का प्रयोग करें।

❖ थ्रिप्स के प्रवेश को रोकने के लिए सीमा पर मक्का/गेहूं की 2–3 पंक्तियाँ लगाएं।

❖ संक्रमण की गंभीरता के आधार पर स्टिकर के साथ प्रोफेनोफोस1 ग्राम/लीटर या कार्बोसल्फान 2 ग्रा./ली. (0.2%) या फिप्रोनिल 1 ग्रा./ली. का छिड़काव करें।

एरियोफिड माइटः पत्तियां पूरी तरह से नहीं खुलती हैं। पूरा पौधा मुड़ जाता है। पीले धब्बे ज्यादातर पत्तियों के किनारों पर देखे जाते हैं।

प्रबंधः

❖ खेत में लक्षण दिखाई देते ही डाइकोफोल 2 ग्रा. प्रति ली. की दर से छिड़काव करें। यदि आवश्यक हो तो 15 दिनों के बाद दोबारा छिड़काव करें।

❖ उपरोक्त बीमारी के अलावा कुछ वायरल रोग जैसे आयरिश येलो स्पॉट वायरस और प्याज येलो ड्वार्फ वायरस इन दिनों आम होते जा रहे हैं। प्रबंधन के लिए स्वस्थ रोपण सामग्री का उपयोग करें, थ्रिप्स की आबादी को नियंत्रित करें और खरपतवार और संक्रमित पौधों को खेत से हटा दें।

कटाई और रचाईः रबी की फसल की कटाई तब की जाती है जब पत्तियां सूख जाती हैं और 75% पौधे में गर्दन गिर जाती है। फसल की कटाई खुर्पी द्वारा की जाती है। सुनिश्चित करें कि कटाई के समय बल्ब को नुकसान न पहुंचे। कटाई के बाद फसल को 3–5 दिनों तक छाया में सुखाया जाता है। उसके बाद, शीर्ष पत्ती को गर्दन क्षेत्र से 1.5–2.0 से.मी. छोड़कर काट दिया जाता है। यह बल्बों को ठीक से सुखाने में मदद करता है।

खरीफ की फसल में पत्ते नहीं सूखते। जैसे ही फसल इष्टतम आकार में पहुँचती है, खाली ड्रम को फसल के ऊपर रोल किया जा सकता है। बड़े प्लाट की स्थिति में सभी फसल को एक साथ न काटें, बल्कि कुछ समय अंतराल पर कटाई करने की सलाह दी जाती है। कटाई खुर्पी से की जाती है। शीर्ष भाग को गर्दन क्षेत्र से 1.5 – 2.0 सेमी छोड़कर काट दिया जाता है और विपणन किया जाता है।

भंडारणः प्याज की निरंतर आपूर्ति के लिए रबी की फसल का भंडारण किया जाता है। फसल को क्युरिंग के बाद संग्रहित किया जाता है। भंडारण से पहले, क्षतिग्रस्त और डबल्स बल्बों को हटा दिया जाना चाहिए। फसल को अच्छी तरह हवादार कमरे में संग्रहित किया जाता है। यदि सुविधाएं उपलब्ध हों, तो फसल को बॉटम–वेंटिलेटेड स्टोरेज स्ट्रक्चर में स्टोर करें।

पूसा भिन्डी– 5 : भिन्डी की पीत शिरा मोजैक विषाणु रोग प्रतिरोधी नई प्रजाति

रमेश कुमार यादव, भोपाल सिह तोमर एवं सुमन लता
सब्जी विज्ञान संभाग,
भा.कृ.अनु.प–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

पूसा भिन्डी–5, भिन्डी की पीत शिरा मोजैक विषाणु रोग प्रतिरोधी प्रजाति है। इसकी खरीफ (वर्षा ऋतु) में पैदावार लगभग 18 टन प्रति हेक्टेयर होती है। इसके फल आकर्षक गहरे हरे रंग एंव मध्यम लम्बाई के होते हैं। पौधे सीधे, लम्बे एंव 2–3 शाखाओ के साथ होते हैं। इसका तना एंव पत्तियॉ हरे रंग के होते हैं। पत्तियॉ में मध्यम कटाव होता है। यह प्रजाति जायद एंव खरीफ दोनों मौसमों में सफलतापूर्वक खेती के लिए उपयुक्त है।

भिन्डी ग्रीष्म काल की एक प्रमुख फसल है। भिन्डी के कच्चे फलों को सब्जी के रुप में प्रयोग करते है। भिन्डी की जड़ो एवं तनों को गुड़ एवं शक्कर को साफ करने में प्रयोग किया जाता है। विश्व के कुछ देशों में भिन्ड़ी के बीज का पाउडर बनाकर कॉफी के रुप में प्रयोग किया जाता है। भिन्ड़ी के दो–चार ताजे फलों को प्रतिदिन खाने से पेट साफ रहता है। भिन्डी में प्रोटीन, कैल्सियम व अन्य खनिज लवण भी उपलब्ध हैं। भिन्डी आयोडीन का भी एक प्रमुख स्त्रोत है। भारत विश्व का सबसे बडा भिन्डी उत्पादक देश है एवं भारत में कुल सब्जी क्षेत्रफल का 4.9 प्रतिशत भूभाग भिन्डी के अर्न्तगत है। वर्तमान में हमारे देश में भिन्डी के अर्न्तगत 0.514 मिलियन हेक्टेयर भू भाग है। जिससे कुल उत्पादन 6,126 मिलियन टन है। सामान्यतः भिन्डी देश के सभी भागो मे उगायाी जाती है परन्तु पश्चिम बंगाल, बिहार, उड़ीसा, आन्ध्रप्रदेश, कर्नाटक, गुजरात, राजस्थान एवं असम प्रमुख भिन्डी उत्पादक राज्य है। दिल्ली एवं उसके सीमावर्ती राज्यों में भी भिन्डी की खेती काफी प्रचलित हो रही हैं। इसके अलावा भिन्डी निर्यात करके विदेशी मुद्रा कमाने में भी एक महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। यदि भिन्डी की खेती वैज्ञानिक ढ़ग से की जाए तो यह एक लाभदायक व्यवसाय हो सकता हैं। वर्षाकाल में भिन्डी की खेती में पीत शिरा मोजैक वायरस एक प्रमुख समस्या हैं जिसके कारण किसानों को 40 से 90 प्रतिशत तक नुकसान हो सकता हैं इसी को ध्यान में रखते हुए इस रोग की प्रतिरोधी भिन्डी की एक नई किस्म पूसा भिन्डी–5, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा 2017 में विकसित की गई हैं। इसकी प्रमुख विशेषताएँ एवं इसकी खेती की पदति निम्न लिखित हैं।

पूसा भिन्डी– 5 की प्रमुख विशेषताएँ :

यह भिन्डी की पीत शिरा मोजैक विषाणु रोग प्रतिरोधी प्रजाति है। इसकी खरीफ (वर्षा ऋतु) में पैदावार लगभग 18 टन प्रति हेक्टेयर तथा जायद (बसन्त ऋतु) में पैदावार 12 टन प्रति हेक्टेयर होती है। इसके फल आकर्षक गहरे हरे रंग के पॉच धारियों वाले एंव मध्यम लम्बाई (10–12 सेमी) के होते हैं। पौधे सीधे, लम्बे एंव 2–3 शाखाओं के साथ होते है। इसका तना एंव पत्तियॉ हरे रंग की होती है। पत्तियों में मध्यम कटाव होता है। यह प्रजाति जायद (15 फरवरी से 15 मार्च बुआई) एंव खरीफ (15 जून से 15 जुलाई बुआई) दोनों मौसमों में सफलतापूर्वक खेती के लिए उपयुक्त है।

पूसा भिन्डी– 5 की खेती की पद्धति :

जलवायुः भिन्डी गर्म मौसम की सब्जी है जिसके लिए लम्बे समय तक अनुकूल मौसम की आवश्यकता पड़ती है। बहुत कम तापमान (18 डिग्री सेल्सियस से कम) पर इनके बीजों का अंकुरण अच्छा नहीं होता।

भूमिः इसको विभिन्न प्रकार की भूमि में उगाया जा सकता है, किन्तु जीवांश युक्त उचित जल निकास वाली दोमट व बलुई दोमट मिट्टी जिसका पीएच मान (अम्लता) 6.0–6.8 हो, ऐसी मिट्टी अधिक पैदावार के लिए उपयुक्त रहती है।

खेत की तैयारीः भिन्डी की खेती के लिए भुरभुरी मिट्टी

की आवश्यकता पड़ती है। जुताई करके मिट्टी भुरभुरी बना लें।

बीज बोने का समयः मैदानी क्षेत्रों में ग्रीष्मकालीन बीज फरवरी से मार्च तक तथा वर्षाकालीन जून से जुलाई तक बोई जाती है। जब की पहाड़ी क्षेत्रों में इसकी बुवाई अप्रैल से जुलाई तक की जा सकती है।

बीज की मात्राः बीज की मात्रा बोने के समय व दूरी पर निर्भर करती है। खरीफ की खेती के लिए 8–10 कि.ग्रा. बीज तथा ग्रीष्मकालीन फसल के लिए 12–15 कि.ग्र. बीज प्रति हेक्टेयर आवश्यकता होती है। अच्छी उपज के लिए शुद्व एवं प्रमाणित बीज का उपयोग करना चाहिए।

बुआई की दूरीः ग्रीष्मकालीन फसल के लिए पौध से पौध 45 सें.मी. व कतार से कतार 30 सें.मी. व वर्षाकालीन फसल के लिए पौध से पौध 60 सें.मी. व कतार से कतार 30 सें.मी. की दूरी रखनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरकः भिण्डी की अच्छी पैदावार के लिए आवश्यक है कि गोबर की खाद के साथ–साथ उर्वरकों का भी संतुलित मात्रा में उपयोग करें। इसके लिए यह आवश्यक है कि पहले से ही मिट्टी की उर्वरता की जांच करा लें। वैसे साधारण भूमि में 20–25 टन सड़ी गोबर की खाद, 100 कि.ग्र. नाइट्रोजन, 50 कि.ग्र. फॉस्फोरस और 50 कि.ग्र. पोटाश प्रति हेक्टयर की दर से उपयोग करना चाहिए। गोबर की खाद खेत की तैयारी के समय अच्छी प्रकार से मिट्टी में मिला लें। नाइट्रोजन की एक तिहाई मात्रा, फॉस्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा बुआई से पूर्व खेत मे मिला लेनी चाहिए। नाइट्रोजन की शैष मात्रा बुआई के 30 व 50 दिन के बाद दो बराबर भागों में फसल में टाप ड्रेसिंग के रुप में दें। उर्वरक देने के बाद मिट्टी की गुड़ाई करें और पौधे की जड़ों पर मिट्टी चढ़ाकर हल्की सिंचाई करें ताकि पौधे उर्वरक आसानी से ले सकें और पौधों को किसी प्रकार की क्षति न पहुॅचे।

बुआई की विधिः भिण्डी की बुआई समतल क्यारियों एवं मेंड़ों पर दोनों ही विधियों से करते हैं। जहॉ मिट्टी भारी तथा जल निकास का अभाव हो वहॉ बुआई मेंड़ों पर की जाती है। अगेती फसल लेने के लिए बीज को 24 घण्टे तक पानी में भिगो कर छाया में सुखाने के बाद बुआई करनी चाहिए। बुआई के पूर्व थिरम या कैपटॉफ नामक कवकनाशी की 2.5 ग्रा. दवा 1 कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें। बुआई से पहले भिन्डी की कतारों में फ्यूरोडान नामक दवा 5 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से डालने पर कीडों का प्रकोप कम होता है।

सिंचाईः बुआई के समय भूमि में पर्याप्त नमी होनी चाहिए एवं पहली सिचाई अंकुरण आने के बाद ही करें (लगभग एक सप्ताह बाद)। फसल में सिंचाई मौसम के अनुरूप आवश्यकता के अनुसार कर । सामन्यतः सिंचाई मार्च में 10–12 दिन, अप्रैल में 7–8 दिन और मई–जून में 4–5 दिन के अन्तराल पर करें। वर्षा ऋतु मे भिंण्डी की फसल में ज्यादा पानी अधिक देर तक नहीं ठहरने दे। यदि पानी अधिक समय तक खड़ा रहा तो फसल पीली पड़कर खराब हो जाती हैं। अतः ज्यादा पानी के निकास की उचित व्यवस्था करनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रणः भिण्डी की फसल के साथ अनेक खरपतवार उग जाते है जो पौधे की विकास एवं बढ़वार पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं। परिक्षणों से पता चलता है कि यदि भिण्डी की फसल को उसके जीवन काल के 35–40 दिनों तक खरपतवार रहित रखा जाय तो वे फसल पर कुप्रभाव नहीं डालते। पौधों की प्रारम्भिक अवस्था में 2–3 बार निराई गुड़ाई करते रहना चाहिए। व्यापारिक स्तर पर रोकथाम के लिए बासालिन 1.5 कि.ग्रा. प्रति 1000 लीटर पानी में घोल कर बुआई के 3–4 दिन पहले जमीन पर छिड़काव करने से खरपतवार नष्ट हो जाते है। इसी प्रकार स्टाम्प 3.3 लीटर प्रति हेक्टेयर 1000 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करने पर खरपतवार नष्ट हो जाते है तथा पैदावार काफी अच्छी प्राप्त होती है। स्टॉम्प का प्रयोग बुआई के तुरन्त बाद जब भूमि में पर्याप्त नमी हो करना चाहिए।

फसल सुरक्षाः

प्रमुख रोगः

पीला मोजैकः इस प्रजाति में यह रोग सामन्यतः नहीं आता हैं परन्तु फसल के अंतिम अवस्था में यदि इस रोग से ग्रसित पौधे दिखाई दें तो उन्हें उखाड़ कर मिटटी में दबा दे।

चूर्णिल आसिता (पाउडरी मिल्डयू)ः प्रभावित पौधो की

पत्तियों पर सफेद पाउडर जैसी परत आ जाती है जो बाद में पीली पड़कर झड़ जाती है। धुलनशील सल्फर के 0.2 प्रतिशत का छिड़काव करने से इस रोग की रोकथाम हो जाती है।

प्रमुख कीटः

कीटों का प्रकोप दिखाई देने पर जैविक या रासायनिक दवाओं का इस्तेमाल करें। जहां तक सम्भव हो जैविक विकल्पों पर बल दें। रसायन डालने के बाद प्रतिक्षा अवधि (लगभग 5 से 7 दिन) के बाद ही फलों की तुडाई करें जिससे उत्पाद में रसायन का अवशैष न रह जाये।

फुदका या तेला (जैसिड): ये हरे रंग के छोटे कीट होते है। और पत्तियों की निचली सतह पर पाये जाते है। शिशु व प्रौढ़ दोनों भिण्डी की पत्तियों से रस चूसते हैं। प्रभावित पत्तियॉ पीली पड़कर उपर की तरफ मुड़ जाती है और सिकुड़ जाती हैं इससे बचाव के लिए एसिटामाइप्रिड 1.0 मि.ली. प्रति चार लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें तथा 10–12 दिनों के अंतराल पर दोबारा छिड़काव करें। बुआई के समय कार्बोफ्यूरान (3जी) 1.0 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि में मिला दें।

तना एवं फल छेदकः यह कीट नवविकसित शाखाओं व फूलों पर अन्डे देता है। इसका लार्वा फल एवं शाखओं में प्रवेश करके नुकसान पहुॅचाना प्रारम्भ कर देते हैं। प्रभावित फल खाने योग्य नहीं रह जाते हैं और टेढ़े हो जाते हैं। प्रभावित फलों एवं शाखाओं को प्रतिदिन कीट सहित तोड़कर मिट्टी में दबा देते है। बीस फेरोमोन ट्रेप को प्रति हेक्टेयर के हिसाब से पूरे खेत में लगाने से कीटों का प्रजनन कम हो जाता है तथा हर महीने के बाद ट्रेप में फैरोमोन दवा को बदलते रहते हैं। फूल आते समय नीम अक्र का 5 प्रतिशत घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिऐ। कीटों का आक्रमण दिखाई देने पर, रोकथाम के लिए मैलाथियान 50 ई.सी. 0.08 प्रतिशत (1.5 मि.ली. प्रति लीटर) तथा इसके बाद 10 दिन के अन्तराल पर स्पिनोसेड दवा की 1.0 मि.ली. मात्रा को प्रति चार लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए तथा 10–12 दिनों पश्चात इसी छिड़काव को दोहरा दें।

लाल माइटः यह बहुत छोटे कीट हैं जो पत्तियों की निचली सतह पर जाला बनाकर उसके अंदर रहते हैं। इनका प्रकोप ग्रीष्म ऋतु में अधिक होता है। इसकी रोकथाम के लिए डाइकोफाल या ओमाइट नामक दवा की 2.5 मिली. मात्रा प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। यदि प्रकोप कम ना हो तो स्पाइरोमेसिफेन (ओबेरॉन) 1 मिली. प्रति 3 लीटर पानी का घोल बनाकर छिड़काव करें।

फलों की तुड़ाईः भिण्डी के 6–7 दिन के फलों को नरम अवस्था में तुड़ाई करें। बहुत छोटे फलों (4–5 दिनों से पहले के फलों) को तोड़ने से उपज कम प्राप्त होती हैं तथा 8–10 दिनों से ज्यादा के फलों में रेसे की मात्रा बढ जाती हैं और उनकी गुणवत्ता खराब हो जाती हैं। समय पर तुड़ाई करने से नये फूल एवं फल ज्यादा आते हैं। फलों का अच्छी तरह वर्गीकरण एवं पैकिंग करके बिक्री करने से मुनाफा ज्यादा मिलता हैं।

उत्पादनः उचित देखरेख व उपयुक्त प्रकार से खेती करने से इस प्रजाति में प्रति हेक्टेयर 18 टन हरी फलियॉ प्राप्त होती हैं।

चित्र–1: पूसा भिन्डी–5 के गाढे हरे एवं मुलायम फल

चित्र–2: पूसा भिन्ड़ी–5 की खेत में फसल

सौंदर्य से संपन्न शीत ऋतु वाले मौसमी पुष्पों की वैज्ञानिक खेती

नमिता, एम के सिंह एवं एस एस सिंधु
पुष्प विज्ञान एवं भूदृश्य निर्माण संभाग,
भा.कृ.अनु.प.– भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

पुष्प अनेक अवसरों पर मानव के व्यक्तित्व को सजाने एवं संवारने में अपना महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। पुष्प विज्ञान वर्तमान में एक प्रमुख व्यवसाय के रुप में उभरता जा रहा है। उद्यान के वातावरण को रंगमय बनाने में जिन पौधों का सबसे अधिक योगदान होता है, वे हैं एकवर्षीय पौधे। यद्यपि उद्यान में द्विवर्षीय, बहुवर्षीय, आरोही व झाड़ीदार पौधे तथा वृक्ष, सभी उगाए जाते हैं। और इनमें से प्रायः सभी पर फूल आते हैं, फिर भी हर ऋतु में उद्यान को पुष्पों से भरा–पूरा रखने के लिए एकवर्षीय पुष्पीय पौधों को उगाया जाना अत्यन्त आवश्यक है। मौसम के अनुकूल उगाए जाने वाले पुष्पीय पौधों को मौसमी पुष्प और एकवर्षीय पौधे कहते हैं। इस समूह के पौधों का जीवन चक्र एक मौसम अथवा अधिकतम् एक वर्ष होता है। विभिन्न रंगो जैसे लाल, गुलाबी, नारंगी, पीला, सफेद, नीला इत्यादि वाले मौसमी फूल घरों, बंगलो, होटल, कार्यालय, उद्योग के भवनों, बगीचों इत्यादि की सजावट हेतु उपयुक्त है। यह वातावरण में प्रदूषण को कम करने के साथ मनुष्य की थकान को भी कम करते हैं। इसके अलावा मौसमी फूलों की खपत राष्ट्रीय एवं अर्न्तराष्ट्रीय हवाई अड्डों तथा बहुमंजली मकानों की बाल्कनियों को सजाने में भी बढ़ती जा रही है। कुछ मौसमी फूलों का उपयोग औषधीय तौर पर किया जा रहा है। मौसमी पुष्पों को उगाने के मौसम के आधार पर मुख्य तीन वर्गों में विभाजित किया गया हैः

ग्रीष्म ऋतु के मौसमी पुष्प

इस ऋतु के मौसमी पुष्प में गर्म वातावरण में पुष्पन होता है। इसकी नर्सरी में बीज की बुवाई फरवरी के प्रथम सप्ताह या मार्च के अन्तिम सप्ताह में की जाती है तथा नर्सरी से पौधों को क्यारियों में मार्च के अंतिम सप्ताह या अप्रैल के पहले सप्ताह में रोपण की जाती है। इस वर्ग में कोचिया, जीनिया, गैलार्डिया, टिथोनिया, गेंदा, कोरिआप्सिस, सूर्यमुखी इत्यादि हैं।

बरसात ऋतु के मौसमी पुष्प

इस ऋतु के मौसम में वातावरण में अधिक आर्द्रता के साथ गर्मी में पुष्पन होता है। इसका पौधे तैयार करने के लिए नर्सरी में बीज की बुवाई मई से जून तथा पौधा रोपण जून से जुलाई माह में क्यारियों या गमलों में किया जाता है। इस समूह में चौलाई, सेलोसिया, टोरेनिया, गमफ्रीना, बालसम, इत्यादि आते हैं।

शीत ऋतु के मौसमी पुष्प

शीत ऋतु में उगाए जाने वाले मौसमी पुष्पों में कम तापमान पर भी पुष्पन होती है। सार्वधिक मौसमी पुष्पों को इसी समूह में रखा गया है। शोभाकारी बगीचों में सर्वाधिक सुन्दरता इसी समूह के पुष्पन बिखरते हैं। शीत ऋतु में पैन्जी, फ्लाक्स, कलेन्डुला, चाइना एस्टर, डाइमारफोथिका, साल्विया, पीटूनिया एन्टीरहिनम, होलीहॉक, जिप्सोफीला, ल्यूपिन, सिनेरिया, स्वीट एलाइसम, वाइला, चौलाई, मौसमी गुलाऊदी, गेंदा इत्यादि उगाया जाता है।

उपयोग के आधार पर शीत ऋतु वाले मौसमी पुष्पों का वर्गीकरण

शरदकालीन मौसमी पुष्पों को सुन्दरीकरण हेतु विभिन्न प्रकार से उगाया जा सकता हैः

मौसमी पुष्पों को विभिन्न स्थानों पर उगाना	मौसमी पुष्पों का नाम
क्यारियों में रोपण हेतु	पैंजी, फ्लाक्स, कलेन्डूला, चाइना एस्टर, डाइमारफोथिका, साल्विया, स्वीट सुल्तान, गेंदा, डहेलिया, स्वीट वीलियम, कैन्डीटफ्ट, एन्टीरहिनम इत्यादि।
गमलों के लिए	कैन्डीटफ्ट, पैंजी, फ्लाक्स, आइस प्लांट, पीटूनिया, डवार्फ गेंदा, स्वीट विलियम, पोरचुलाका, साल्विया, कलेन्डूला इत्यादि।
लूज फ्लावर हेतु	मौसमी गुलदाऊदी, गेंदा, एस्टर, इत्यादि।
लटकती गमलों या टोकरियों हेतु	नसटर्शियम, फ्लाक्स, पोरचुलाका, डेजी, पैंजी, पिटूनिया, बरबीना, स्वीट एलाइसम, डवार्फ गेंदा, जीनिया, एजरेटम इत्यादि
शुष्क पुष्प हेतु	पेपर फ्लावर, स्टेटिस, मोलुसुला, कार्नेशन, काक्स काम्ब, डेजी, इत्यादि।
छायादार स्थान पर उगाने हेतु	सिनेरैरिया, साल्विया, एजीरेटम, एलाइसम, फ्लाक्स, बरवीना, क्लाक्रिया इत्यादि।
कर्तित पुष्प हेतु	स्वीट विलियम, कार्नेशन, स्वीट सुल्तान, हेलीक्राइसम एन्टीरहिनम, एस्टर, लाक्रइस्पर, ल्यूपिन इत्यादि ।
सुगंध हेतु	स्वीट एलाइसम, कार्नेशन, गेंदा, फ्लाक्स, स्टाक, स्वीट वीलियम इत्यादि ।
बेल (क्लाइम्बर) हेतु	स्वीट पी, मार्निंग ग्लोरी, नस्टर्षियम इत्यादि।
ग्रीन फीलर हेतु	मोलुसुला, जिप्सोफिला, कोचिया इत्यादि।
पत्थरीली उद्यान हेतु	वरबीना, आइस प्लांट, फ्लोक्स, स्टाक, नस्टर्षियम इत्यादि।
माला हेतु	गैदा, मौसमी गुलादाउदी, जीनिया, गैलार्डिया इत्यादि।
किनारी के लिए	वरवीना, डवार्फ गेंदा, पारचुलाका, स्वीट एलाइसम, आइस प्लांट इत्यादि।
पौध बिना तैयार किए बीज को स्थाई स्थान पर बुवाई करने वाले मौसमी पुष्प	मार्निंग ग्लोरी, स्वीट पी, ल्यूपिन एवं नस्टर्षियम इत्यादि।

विभिन्न रंगों के फूलों का विवरणः

अलंकृत उद्यान में रंगों का विषेष महत्त्व है। रंगों के उचित प्रयोग से उद्यान में आलौकिक छटा उत्पन्न की जा सकती है। चमकीले रंगों के साथ हल्के रंग वाले फूल व सुन्दर पत्तियों वाले पौधों को उचित अनुपात में लगाना चाहिये, जिससे मनोहारी दृश्य उत्पन्न हो सके। विभिन्न रंगों के फूलों का विवरण निम्नानुसार है–

नीले रंग के मौसमी फूलः एस्टर, फ्लाक्स, सालविया, कॉर्नफ्लावर, पिटुनिया, पेन्सी एजीरेटम, एलाइसम आदि।

लाल रंग के मौसमी फूलः एस्टर, फ्लाक्स, सालविया, डहलिया, एन्टीराइनम, स्वीट विलियम, पेन्सी, कारनेशन आदि।

पीले रंग के मौसमी फूलः कैलेन्डुला, गेंदा, एन्टीराइनम, डेहलिया, गेलार्डिया, गजानिया, पॉपी, स्टेटिस आदि।

नारंगी रंग के मौसमी फूलः कैलेन्डुला, गेंदा, डहलिया, सेवन्ती, गजानिया, फ्लाक्स, नस्टरशियम आदि।

बैंगनी रंग के मौसमी फूलः स्टेटिस, फ्लाक्स, पेन्सी, एजीरेटम, एलाइसम, एस्टर, पिटुनिया आदि।

सफेद रंग के मौसमी फूलः कैन्डीटफ्ट, एलाइसम, एस्टर, सेवन्ती, कारनेशन आदि।,

शीत ऋतु वाले मौसमी फूलों की तालिका

बोने का समय : मैदानी क्षेत्र – अक्टूबर से नवम्बर

फूलने का समय : मैदानी क्षेत्र – जनवरी से अप्रैल

फूल का नाम	बोने की विधि	ऊँचाई (सेमी.)	फूल का रंग विवरण
आक्रटोटिस	रोपण	30-40	सफेद, नारंगी, लाल आदि
एक्रोक्लाइनम	बीज द्वारा व रोपण द्वारा	30-60	गुलाबी, सफेद आदि
एजीरेटम	रोपण	15-20	नीला, सफेद
एलाइसम	रोपण	10-15	सफेद, गुलाबी क्यारियों व एजिंग के लिये अच्छा
एन्टीराइनम	रोपण	15-20	नीला, लाल, बैंगनी, गुलाबी आदि रंगों में गमलों, क्यारियों व कटे फूल के लिये उत्तम
कार्नक्लावर	रोपण	50-90	नीला, गुलाबी, बैंगनी, सफेद आदि रंग, बोर्डर व क्यारियों के लिये उत्तम
कारनेशन	रोपण	45-75	लाल, बैंगनी, सफेद आदि अनेक रंग गमलो, क्यारियों, कटे फूल के लिये उत्तम
केम्पेनुला	रोपण	30-75	नीला, सफेद, बैंगनी आदि
कैलेन्डुला	रोपण	30-75	पीला, नारंगी, क्यारियों व गमलों के लिय उत्तम
कैल्सियोलेरिया	रोपण	25-30	पीला, लाल आदि
कैनटीटफ्ट	रोपण	25-40	सफेद, बैंगनी, क्यारियों मे उत्तम
केलीफोर्निया पोपी	बीज द्वारा व रोपण	25-45	पीला, सफेद, नारंगी आदि क्यारियों के लिये अच्छा
क्लाक्रिया	रोपण	30-90	लाल, गुलाबी, क्यारियों के लिये उत्तम
कैरिआप्सिस	बीज व रोपण	25-90	नारंगी, लाल, मिश्रित
गजेनिया	रोपण	20-40	नारंगी, लाल, सिन्दूरी आदि
गुडेसिया	रोपण	45-75	गुलाबी, गहरा गुलाबी, सफेद आदि क्यारियों व बॉर्डर के लिये उत्तम
गैलार्डिया	रोपण	30-60	पीला, लाल आदि मिश्रित रंग, कम पानी वाली जगह में भी अच्छा होता है।
गेंदा	रापण व कलम	15-20	नारंगी, लाल, पीला, सफेद, मखमली आदि रंग
जैरेन्थीमम	रोपण	40-75	लाल, बैंगनी, गुलाबी आदि
डहलिया	बीज, कटिंग व बल्ब द्वारा	30-90	लाल, सफेद, पीला, नीला, नारंगी व मिश्रित रंग, गमलों व क्यारियों के लिये उत्तम
डेजी	रोपण	10-15	सफेद, गुलाबी
डाइमोर्फोथिका	रोपण	25-40	सफेद, नारंगी, गुलाबी आदि
डाइऐन्थस (पिंक)	रोपण	15-35	लाल, नीला, सफेद, बैंगनी आदि रंग क्यारियों के लिये अच्छा
नाइजेला	रोपण	45-60	नीला, गुलाबी, लाल, सफेद, आदि रंग
निमेषिया आदि	रोपण	30-35	लाल, पीला, नीला, सफेद, गुलाबी, जामुनी
निकोसियाना एलाटा	बीज व रोपण	30-100	सफेद, लाल, गुलाबी आदि
नस्टरशियम	बीज, रोपण व कमल द्वारा	25-100	पीला, नारंगी, लाल आदि रंग, लता की तरह फैलने वाली
पिटूनिया	बीज व रोपण	15-50	सिंगल व डबल, लाल, सफेद, नीला आदि रंग क्यारियों व गमलों के लिये उत्तम
पैंजी	रोपण	10-30	पीला, नीला, सफेद लाल आदि अनेक मिश्रित रंगों में क्यारियों व गमलों के लिये उत्तम

पैपी	बीज व रोपण	45-60	लाल, गुलाबी, सफेद, सिंगल व डबल
फ्लाक्स	बीज व रोपण	20-30	लाल, गुलाबी, नीला, सफेद आदि अनेक रंग क्यारियों व गमलों के लिय उत्तम
वाल फ्लावर	रोपण	25-30	सफेद, लाल आदि रंग
बेबी ब्रीथ	रोपण	25-30	सफेद, लाल
ब्रैची कॉम	रोपण	15-25	पीला, सफेद, नीला आदि क्यारियों व बोर्डर में उत्तम
मिग्नोनेट	रोपण	30-50	पीला, लाल आदि
मिक्यूलस (मंकी फ्लावर)	रोपण	25-30	लाल, नारंगी, पीला मिश्रित
रूडबेकिया	रोपण	45-90	नारंगी, पीला, लाल, सफेद आदि
रेनकुलस	रोपण व बल्ब द्वारा	20-40	पीला, लाल, सफेद, गुलाबी आदि रंगों में क्यारियों के लिये उत्तम
लाक्रस्पर	रोपण	30-100	नीला, बैंगनी, गुलाबी, सफेद आदि रंग
लाइनेरिया	बीज व रोपण	30-40	लाल, सफेद आदि अनेक रंगों में
लाइनम	रोपण	50-60	लाल गुलाबी आदि
लुपिन	रोपण	30-90	लाल, सफेद, गुलाबी आदि
लिविंग स्टोन डैजी (आइस फ्लावर)	बीज व रोपण	5-10	लाल, सफेद, गुलाबी, पीला आदि अनेक रंग
बैल्स ऑफ आयरलैंड	रोपण	45-75	हल्का हरापीला, कटोरी के आकार के सूखे फूल भी अच्छे।
बैनीडियम	रोपण	30-40	नारंगी, लाल आदि।
वरबीना	रोपण	20-30	लाल, गुलाबी, सफेद, नीला आदि रंग, क्यारियों के लिये अच्छा
वार्शिक गुलदाउदी	रोपण	45-90	पीला, सफेद आदि रंग क्यारियों व बार्डर के लिये अच्छा
स्वीट सुल्तान	रोपण	60-90	सफेद, गुलाबी आदि रंग खुशबूदार फूल
स्वीट विलियम	रोपण	30-45	कटे फूल के लिये अच्छा, गुलाबी, लाल, गहरा लाल आदि मिश्रित रंगों में
स्वीट पी	बीज द्वारा	30-250	लाल, गुलाबी, सफेद, नीला आदि अनेक रंग, लता की तरह बढ़ने वाली खुशबुदार फूल
साइनेरेरिया	रोपण	30-45	लाल, नीला, सफेद, गुलाबी आदि अनेक रंग, क्यारियों व गमलों में उत्तम अर्ध छाया में अच्छा
स्टॉक	रोपण	30-75	लाल, सफेद, नीला, पीला, बैंगनी आदि रंग, क्यारियों, गमलों बोर्डर के लिये व कटे फूलों के लिये अच्छा
हॉलीहॉक सिंगल	रोपण व बीज द्वारा	60-150	लाल, सफेद, गुलाबी, बैंगनी आदि रंगो में व डलब फूल बोर्डर के लिये अच्छा

शीत ऋतु वाले मौसमी फूलों को उगाने की तकनीक

प्रवर्धन

शीत ऋतु वाले मौसमी पौधों में अधिकांश पौधों की नर्सरी में बीज की बुवाई तकनीक से पौध सामग्री तैयार की जाती है। जब नर्सरी में पौधे 4 से 6 सप्ताह के हो जाते हैं तो उन पौधों का क्यारियों या गमलों में रोपण कर दिया जाता है।

पौधशाला (नर्सरी)

शीत ऋतु वाले मौसमी पौधों के बीजों को सितम्बर से अक्टूबर के माह में बोया जाता है। मौसमी पुष्पों के बीज सामान्य तौर पर छोटे होते हैं इसलिए इनकी बुवाई सघन की जाती है। नर्सरी में क्यारियां बनाने से पहले बलुई दोमट मिट्टी की अच्छी तरह गुड़ाई करके खरपतवार

रहित कर लेते हैं। यदि मिट्टी में बालू एवं जीवांष पदार्थ की मात्रा कम लगे तो नदी का बालू एवं गोबर की सड़ी खाद या वर्मी कम्पोस्ट नर्सरी की मिट्टी में अच्छी तरह 8–10 से0 मी0 गहराई तक मिला देना चाहिए। जब नर्सरी की मिट्टी भुरभुरी बन जाए तथा उसे 4 मीटर लम्बी 60 से 80 से0 मी0 चौडी तथा दो क्यारी के बीच 1 फूट का रास्ता छोडकर बनाना चाहिए । क्यारियों को 0.2 प्रतिशत कैप्टान के घोल से उपचार करना चाहिए। मौसमी फूलों के बीजों को क्यारियों में बुवाई से पहले बाविस्टीन पाउडर से उपचारित करना चाहिए। नर्सरी में बनाई गई क्यारियों में मौसमी फूलों की बीज की बुवाई पंक्तियों में 1 से 2 से0मी0 गहरा तथा दो पक्तियों में 5–6 से0मी0 का फासला रखते हुए करनी चाहिए। नर्सरी में क्यारियों को सुबह एवं सायंकाल सिंचाई करनी चाहिए। समय–समय पर क्यारियों से खरपतवार निकालते रहना चाहिए इस प्रकार 4 से 6 सप्ताह में पौधे रोपाई के लिए तैयार हो जाते हैं।

पौध प्रतिरोपण

जब पौध में तीन–चार पत्तियाँ आ जाए वह प्रतिरोपण की सही अवस्था होती है। प्रतिरोपण से दो–तीन दिन पहले से पौधशाला की क्यारियों की सिंचाई बन्द कर देनी चाहिये ताकि पौध दृढ़ हो सके। मौसमी फूलों के पौधों को नर्सरी से क्यारियों या गमलों में सायंकाल रोपण करना अच्छा होता है। पौध प्रतिरोपण के लिये उचित आकार की क्यारियाँ बनाकर उनकी मिट्टी को भली–भाँति खरपतवार रहित एवं महीन व भुरभुरी बना लिया जाना चाहिये। खेत तैयार करते समय भली–भाँति सड़ी हुई बोबर की खाद जो कि पिसी और छनी हुई हो, मिट्टी में मिला देनी चाहिये। विभिन्न मौसमी फूलों का पौध रोपण के लिए पंक्ति से पंक्ति एवं पौधे से पौधे की दूरी 15 x 15 से0मी0 या 30 x 30 से0मी0 या 45 x 30 से0मी0 या 45 x 45 से0मी0 रखा जाता है। यह दूरी मौसमी पुष्पों की फसल एवं किस्मों के फैलाव पर निर्भर करता है।

सिंचाई

शीत ऋतु वाले मौसमी पुष्प का पौध सामग्री बहुत ही नाजुक होता है इसलिए पौध रोपण के साथ–साथ क्यारियों का सिंचाई करना चाहिए। सामान्यतौर देखा गया है कि मौसमी पुष्पों को कम अंतराल में सिंचाई करना चाहिए। सिंचाई का पानी खारा नहीं होना चाहिए तथा क्यारियों मे नमी बनी रहनी चाहिए। मौसमी पुष्प के बीज पकने पर सिंचाई बन्द कर देना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

उपजाऊ मिट्टी एवं अच्छी तरह तैयार की गई क्यारियों में मौसमी पुष्पों की वृद्धि एवं विकास अच्छा होता है। क्यारियों को बनाते समय 5–8 किलोग्राम/वर्गमीटर गोबर की सड़ी खादए 8–10 ग्राम/वर्गमीटर फॉस्फोरस एवं पोटाश मिट्टी में मिला देना चाहिए। पौध रोपण 20 से 25 दिन बाद 5–8 ग्राम नत्रजन/वर्गमीटर एवं पुनः 40 से 50 दिन बाद 5–8 ग्राम/वर्गमीटर नत्रजन क्यारियों में फैला देना चाहिए।

शीर्ष नोचन एवं डिस्बडिंग

कुछ शीत ऋतु वाले मौसमी फूलों मे पौधों के शीर्ष भाग की बढ़वार बहुत तेज हाने के कारण उन पौधों की शाखाओं की बढवार कम हो जाती है इसलिए इस समूह में आने वाले सभी मौसमी फूलों के पौधों को रोपण के 20–30 दिन बाद शीर्ष भाग को तोड़ देना चाहिए। इस विधि को शीर्ष नोचन कहते हैं। जब शीर्ष भाग पर कलिका बन जाए उसे शीध्र ही तोड़ दिया जाए तो उसे डिस्बडिंग कहते हैं। डिस्बडिंग करने से पौधों की शाखाओं में कलिका की वृद्धि एवं विकास अच्छा होता है।

निराई . गुडाई

शीत ऋतु वाले मौसमी पुष्पों की क्यारियों या गमलों में निराई–गुडाई इस प्रकार करना चाहिए कि वह खरपतवार रहित हो तथा उसकी मिट्टी भुरभुरी बनी रहे। मौसमी फूलों मे गुड़ाई हल्की करनी चाहिए क्योंकि उसके पौधों की उथली जड़ें होती हैं।

कीट एवं रोग

कीट

कीट	रोकथाम
एफिड़	मैलाथियान 1–1.5 मिली लीटर या रोगर 1 मिलीलीटर/प्रतिलीटर पानी में घोलकर 10–12 दिन के अतंराल में छिड़काव करना चाहिए।

कैटरपीलर	मैलाथियान 1–1.5 मिली लीटर या रोगर 1 मिलीलीटर/लीटर पानी में घोलकर 10–12 दिन के अतंराल में छिड़काव करना चाहिए।
थिप्स	रोगर या मोनोक्रोटोफास 1.0 मिली लीटर/लीटर पानी में घोलकर पौधों पर छिड़काव करना चाहिए।
लाल मकड़ी	डाइकोफोल 1 मिलीलीटर या ओमाइट 0.3 मिली लीटर प्रति लीटर पानी में घोलकर पौधों पर छिड़काव करना चाहिए।
लीफ हापर	रोगर 1 मिलीलीटर/लीटर पानी में घोलकर 10–12 दिन के अतंराल में छिड़काव करना चाहिए ।

रोग

रोग	पहचान एवं रोकथाम
बोट्राइटिस	पत्तियों पर भूरे रंग का धब्बा पड़ने लगता है तथा पत्तियां बाद में गलने लगती हैं। इसकी रोकथाम के लिए मैन्कोजेब 2.0 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर पौधों पर छिड़काव करना चाहिए।
डैम्पिंग आफ	यह बीमारी नर्सरी में होती है। इस बीमारी में पौधा बहुत ही छोटी अवस्था में जमीन के पास से गल कर मर जाता है। इसकी रोकथाम के लिए नर्सरी की मिट्टी को बीज की बुवाई से पहले अच्छी तरह धूप दिखाना चाहिए। बीज की बुवाई से पहले कैप्टान नामक कवकनाशी से उपचारित करना चाहिए। कप्टान 2.0 ग्राम प्रतिलीटर पानी में घोलकर फुहार से नर्सरी में ड्रेन्च कर देना चाहिए।
लीफस्पाट एवं ब्लाइट	लीफ स्पाट में पत्तियों पर छोटे आकार के भूरे धब्बे पड़ जाते हैं। लेकिन पत्तियों नहीं गलती है। इसकी रोकथाम डाईथेन एम–45 को 2.0 ग्राम/लीटर पानी में घोलकर पौधों पर छिड़काव करना चाहिए।
पाउडरी मिल्डयू	पाउडरी मिल्डयू से प्रभावित पौधों की पत्तियों पर सफेद पाउडर जैसा पदार्थ दिखाई देने लगता है। इसकी रोकथाम के लिए कैराथेन 1 मिलीलीटर या क्लेक्जिन 0.3 मिली लीटर प्रति लीटर पानी में घोलकर पौधों पर छिड़काव करना चाहिए।

बीज को इकट्ठा करना

मौसमी पुष्पों में अधिकांशतः देखा गया है कि जब पौधों में पुष्प समाप्त होने के 4–5 सप्ताह बाद पौधों की पत्तियां सूखने लगती हैं तथा बीज भी सूख जाते हैं उस समय पौधों से बीज इक्ट्ठा करके सफाई के उपरान्त छाया में सूखा कर कपड़े के थैले कागज के लिफाफा में शुष्क स्थान पर रख देना चाहिए। क्यारियों में बीज की बुवाई से पहले मौसमी पुष्प के बीजों पर नमी नहीं लगनी चाहिए।

शीत ऋतु वाले मौसमी पुष्पों में भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान की भूमिका

शीत ऋतु वाले मौसमी पुष्पों की तकनीक

पुष्प विज्ञान एवं भूदृश्य निमार्ण संभाग, भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली ने मौसमी पुष्पों की खेती करने की तकनीक को विकसित करके देश कि विभिन्न भागों के नर्सरी तक पहुँचाने का कार्य कर रहा है।

पुष्पों का बीज किट

इस प्रयास में संस्थान ने शीत ऋतु के मौसमी पुष्पों का बीज किट भी विकसित किया है। यह किट उचित मुल्य पर नर्सरी एवं घरों में पुष्पीय शोभा हेतु लोगों को उपलब्ध करा रहा है। यह संस्थान किचेन गोर्डेन एशोसियेसन के माध्यमों से हर वर्ष मौसमी पुष्पों के बीज किट अधिक लोगों तक पहुँचाने के लिए भी बीजों को बहुत लोगों तक पहुँचाया है।

पुष्पों से नर्सरी द्वारा स्वरोजगार

यह संस्थान मौसमी पुष्पों का केवल बीज बनाने का ही कार्य नहीं करती है बल्कि इन बीजों से पौधा बनाकर तथा लोगों को पौधा या इन पौधों को गमलों में लगाकर बेच कर भी अच्छी आय लेने की तकनीक को भी स्वरोजगार हेतु बताता है।

पुष्प की प्रदर्शन इकाई से स्वरोजगार

इस संस्थान के पुष्प विज्ञान एवं भूदृश्य निर्माण संभाग के प्रयास से पिछले वर्ष गैंदा मौसमी पुष्प का प्रदर्शन इकाई जिला हापुड़ में लगाया गया था। इस प्रदर्शन इकाई से किसान को अच्छी आय मिलने के कारण आस–पास के अन्य किसान भी गेंदा की खेती करना चाह रहे हैं।

उत्तर भारत में अंगूर के बागों की सधाई और काट–छाँट की वैज्ञानिक विधियाँ

महेन्द्र कुमार वर्मा, विश्व बन्धु पटेल एवं अरविन्द
फल एवं औद्यानिकि प्रौद्योगिकी संभाग
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

संसार के उपोष्ण क्षेत्रों में अंगूर प्राचीनतम और विशिष्ट महत्व वाला फल है। अंगूर एक स्वादिष्ट फल है तथा भारत में इसे ताजा प्रयोग किया जाता है। इसके सूखे उत्पाद जैसे किशमिश तथा मुनक्का की भी बहुत मांग रहती है। अंगूर की उत्पादित किस्मों में चीनी (मिठास) की मात्रा 18–20 प्रतिशत के लगभग पायी जाती है। अंगूर में मोनोसैकेराइड शक्ररा, ग्लूकोस एवं फ्रक्टोज अधिक होने के कारण इसके फल स्फूर्तिदायक माने जाते हैं। भारत में अंगूर की खेती कर्नाटक, महाराष्ट्र, तमिलनाडु तथा आंध्र प्रदेश में प्रमुख रूप से की जाती है, वहीं उत्तर भारत में पंजाब हरियाणा, तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश में व्यापक रूप से की जा रही है।

उत्तर भारत में शीत ऋतु के मध्य जड़ बेलों से पत्ते गिरने पर सधाई और काट–छाँट की जरूरत पड़ती है। इससे फलों का विकास एवं गुणवत्ता पर लाभदायक प्रभाव पड़ता है इसलिए अंगूर की बेलों में सही तरह से सधाई एवं काट–छाँट शीत ऋतु के मध्य में करने की सलाह दी जाती है। सधाई एवं काट–छाँट विभिन्न प्रजातियों में भिन्न–भिन्न प्रकार से किया जाता है। इसका विस्तृत विवरण नीचे दिया गया है।

अंगूर में सधाई और कांट छाँट

अंगूर में फलत की नियमितता, उत्पादन और अच्छे गुणों के विकास हेतु उचित सधाई और अधिक कांट छांट की आवश्यकता होती है। अंगूर की लताओं में शीर्षस्थ वृद्धि अधिक होती है अतः उनकी सीधी बढवार को रोकने के लिए निम्न क्रियाओं की आवश्यकता होती है जिसके अभाव में लताओं की उचित वृद्धि और फलत संभव नहीं हो पाती, पौधों की प्रारम्भिक अवस्था में एक मजबूत तना विकसित किया जाता है जिस पर फल धारक शाखाओं को बढ़ने दिया जाता है। अंगूर को साधने की निम्न विधियाँ निम्नलिखित है।

हेड विधि

कम तथा मध्यम ओज वाली किस्में जैसे ब्यूटी सीडलेस, परलेट, कार्डिनल आदि किस्मों की इन विधियों के द्वारा सधाई की जाती है। लगाने के एक वर्ष पश्चात अंगूर की वृद्धि लगभग 90 से.मी. होनी चाहिए और जाड़े में इसकी जड़ें भली–भांति विकसित हुई हो। जाड़े में इन पौधों को दो गाठें छोड़कर कांटना चाहिए तथा पौधे की लम्बाई अधिक होने पर इसे 3–4 गांठे छोड़कर कांटना चाहिए। अगले वर्ष की वृद्धि हेतु पौधों को बांस या लकड़ी आदि से सहारा देना चाहिए उसके बाद जो शाखा सबसे ओजस्वी हो, बढ़ने देना चाहिए। तीसरे वर्ष जिस उँचाई से पौधों से शाखाएँ लेनी है उससे लगभग 30 से.मी. ऊपर से काट देना चाहिए, ऐसा करने से निचे की गांठो से नयी शाखाएं निकलेंगी। प्रमुख तने के उपरी भाग से निकली शाखाओं को छोड़कर, नीचे से निकली शाखाओं की वृद्धि को काट देना चाहिए। इस प्रकार तीसरे साल की पौधे की हेड विधि से सधाई पूरी होगी तथा इस विधि में पौधे से पौधे की दूरी 1.8 x 2.4 मीटर रखनी चाहिए।

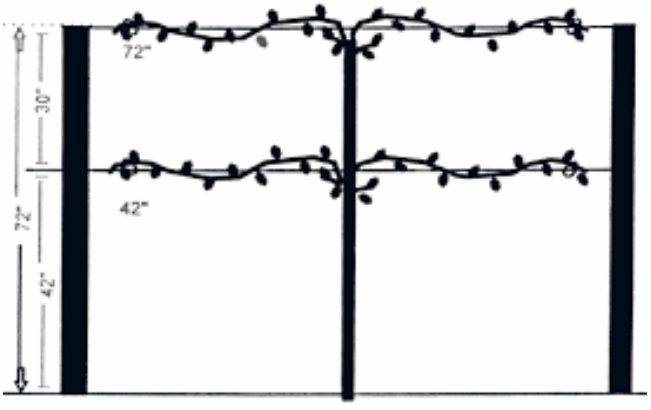

ट्रेलिस विधि

यह विधि कम ओज वाली किस्मो के लिए उत्तरी भारत में अधिक प्रचलित है। इसके कई परिवर्तित रूप हैं जिन्हें कार्डन या निफिन आदि नामों से जाना जाता है। इसके लिए लोहे के खम्बों से दो तार खींच दिए जाते है। पहला तार भूमि से 120 से.मी. ऊपर तथा दूसरा तार 150 से.मी. उपर खींचा जाता है। पौधे से पौधे की दूरी 3 मीटर राखी जाती है। आरम्भ में अंगूर कि लता को ऊपर दी गई विधि से साधा जाता है, फिर इसके प्रमुख तने को भूमि से 160 से. मी. उँचाई पर ले जाकर काट दिया जाता है नीचे के हिस्से में तारों पर आस पास की कलियों से निकलने वाले प्ररोहो को बढ़ने दिया जाता है और उसके अलावा निकलने वाले प्ररोहो को निकल दिया जाता है इस प्रकार प्रत्येक लता में चार भुजायें विकसित होती हैं जिसमे एक दिशा में दो लताये और दूसरी दिशा में दो लताओं को आगे बढ़ने दिया जाता है। इन्हीं भुजाओं पर लम्बे प्ररोह विकसित होते है जो फलते फूलते रहते है। इन्हें कांट–छाँट कर अच्छी दशा में रखा जाता है ताकि वर्षो तक फलत होती रहे। कभी कभी इन भुजाओं को ही फल देने वाले प्ररोह के रूप में विकसित किया जाता है। ऐसी दशा में फलने के बाद इन्हें दो गाँठ छोड़कर काट दिया जाता है। जिससे प्रत्येक वर्ष नहीं भुजा तैयार हो और अगले वर्ष फलत हो। इसके पहले पिछले साल का प्ररोह तैयार रहता है जिसे 12 गाठें छोड़कर काटा जाता है। इसे निफिन विधि कहते है ये केवल उन्हीं किस्मो के लीये प्रयोग में लायी जाती है जिनमे फलत लम्बे प्ररोह पर होती है इनमे पूसा सीडलेस, थाम्पसन सीडलेस प्रमुख है।

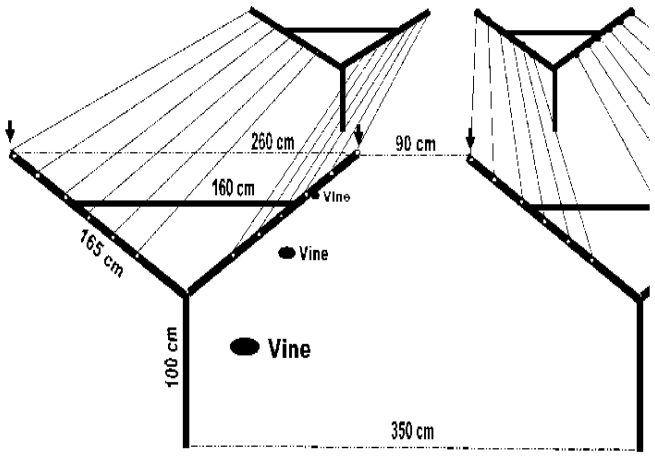

बावर या पंडाल विधि

यह विधि मुख्य रूप से अधिक ओज वाली किस्मों जैसे पूसा सीडलेस, बंगलौर ब्लू, थाम्पसन सीडलेस, अनाब–ए–शाही, ब्लैक प्रिन्स और भौकरी आदि के लिए प्रयोग की जाती है। इसे विधि में पत्थर, ईंट या लोहे के खम्बों पर लगभग 180–200 से.मी. की उंचाई पर चारों दिशाओं में 15 से.मी. की दूरी पर तार खिंच दिए जाते हैं। जिससे ऊपर तारों का पंडाल सा बन जाता है। इसमें पौधों की आपसी दूरी कुछ अधिक 3.60–4.50 मीटर या 4.50–5. 40 मीटर रखी जाती है। इस विधि में पंडाल की उंचाई से कुछ अधिक दूरी पर ले जाकर ही तने को काटा जाता है। जिससे की निचे से जो प्ररोह निकले उन्हें पंडाल पर चारों दिशाओं में फैलाया जा सके। इन्हीं प्रमुख भुजाओं पर जो प्ररोह निकलते है उन्हीं से फल–फूल लिया जाता है। चूँकि यह एक खर्चीली विधि है लेकिन इस विधि में गुच्छे अन्दर की तरफ लटकते हैं और उन पर सूर्य की रोशनी तथा चिडियों द्वारा कम नुकसान होता है, साथ ही हार्मोन से उपचारित करने में भी आसानी रहती है।

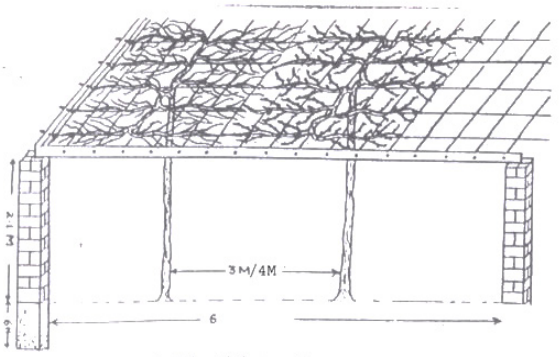

Training of vines on Bower system.

काट–छाँट की विधियाँ

उत्तर भारत में अंगूर की कांट–छाँट का समय तथा विधि दक्षिण भारत से भिन्न होती हैं क्योकि यहाँ जाड़े के मौसम में अंगूर प्रसुप्त अवस्था में रहता है इसलिए उत्तर भारत में अंगूर की कांट–छाँट दिसंबर–जनवरी में की जाती है। पेन्सिल की मोटाई के प्ररोहों को 3–5 गांठे छोड़कर काट दिया जाता है। कमजोर और अपरिपक्व तथा सुखी व् रोगग्रस्त शाखाओं को पूरा काटकर अलग कर दिया जाता है। थाम्पसन सीडलेस और पूसा सीडलेस किस्मों में

प्ररोहों को 9 से 12 गाठें छोड़कर काटा जाता है जिससे अधिक से अधिक गाठों से फूलने वाले प्ररोह निकलें। चूँकि हमारे देश की गर्म जलवायु काटे हुए भाग के ठीक नीचे वाली कुछ गाठों से प्ररोह निकलते है अतः प्रतिवर्ष भुजा की लम्बाई बढती है और फलने वाला भाग दूर होता जाता है। इसलिए कभी कभी भुजा को मोड़कर बांध दिया जाता है जिससे अधिकांश गाँठों से प्ररोह निकलें और लता का फलने वाला भाग एक निश्चित दूरी पर रहे। कभी–कभी ऐसी लम्बी लताओं को पूरा काट देना होता है। ऐसा करने से फसल पर तो बुरा असर पड़ता है पर फलने वाला भाग एक निश्चित दायरे में रहता है।

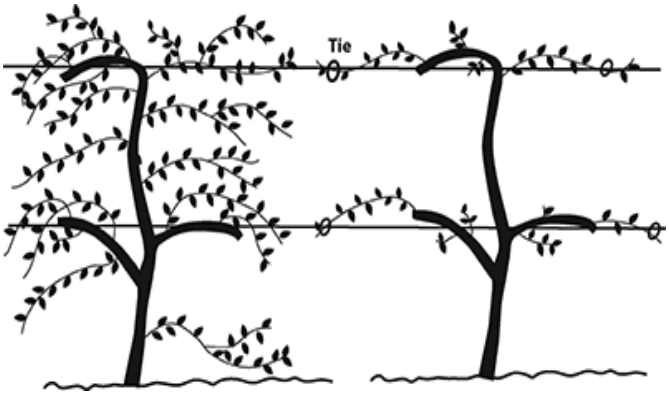

इस प्रकार किसान भाई अंगूर में उचित सधाई, सही समय व् सही तरीके से कांट–छाँट करके फलों की गुणवत्ता तथा उत्पादन को बढ़ा सकते हैं तथा अंगूर की खेती से अच्छी आमदनी पाप्त कर सकते है।

सधाई प्रक्रिया तकरीबन दो से तीन चरणों में तैयार होती है। छंटाई के लिए सुषुप्ता अवस्था में बेलों को कैंची (सिकेटियर) के द्वारा की जाती है। छंटाई की प्रक्रिया में जिस भाग पर फल लगे हों उन्हें किस्म के ओजस्व के आधार पर सीमित गांठों तक काट देते हैं। सधाई विधि के आधार पर बेलों की छंटाई होती है। सभी किस्मों के बेलों पर 'रिनिवलस्पर' (दो गांठ) व 'केन' (4 या अधिक) के आधार पर काटते हैं। प्रत्येक वर्ष 'रिनिवलस्पर' व 'केनस्पर' बेलों पर छोड़ते हैं। छंटाई के तुरन्त बाद बलाईटॉक्स (0.2 प्रतिशत) या बावस्टिन का छिड़काव करना चाहिए। किस्मों में छंटाई का ब्यौरा नीचे सारणी– 1 में दी गई है।

सारणी–1: उत्तरभारत की प्रमुख किस्मों का छंटाई ब्यौरा

किस्म	गांठों की संख्या
ब्यूटी सीडलेस	2–3
पर्लेट	3–4
पूसा सीडलेस	10–12
पूसा उर्वषी, पूसा अदिति, पूसा त्रिसार	4–6
पूसा नवरंग	4–6
फ्लेम सीडलेस	
पंजाब मैक्स पर्पल	6–8

उत्तर भारत के लिए उपयुक्त अंगूर किस्में

ब्यूटीसीडलेसः यह एक शीघ्र पकने वाली किस्म है। इसके गुच्छे मध्यम आकार, दानें सरस, छोटे या मध्यम आकार के होते हैं। गूदा मुलायम एवं हल्का अम्लीय होता है। इस किस्म में कुल घुलनशील शक्ररा (टी.एस.एस.) 18–19 प्रतिशत है। यह किस्म मध्य जून तक पकती है। तत्काल खाने या पेय बनाने के लिए भी उपयुक्त किस्म है।

पर्लेटः यह एक बीज रहित, शीघ्र पकने वाली किस्म है। इसके गुच्छे मध्यम से लम्बे, दाने सरस, हरा, मुलायम गूदा व पतले छिलका वाला होता है। इस किस्म की कुल घुलनशील शक्ररा 18–20 प्रतिशत तक पाई जाती है। यह किस्म जून के प्रथम सप्ताह में पकना शुरू होती है।

पूसा सीडलेसः यह जून के मध्य से तीसरे सप्ताह तक पकता है। गुच्छे मध्यम, लम्बे, बेलनाकार, सुगंध युक्त एवं गठे हुए होते हैं। फल छोटे व अण्डाकार होते हैं तथा पकने पर पीले सुनहरे रंग के हो जाते हैं। फल खाने तथा किशमिश बनाने के योग्य होते हैं।

पूसा उर्वशीः यह एक शीघ्र पकने वाली किस्म है। जिसके गुच्छे कम गठीले एवं मध्यम आकार के होते हैं। दाने बीजरहित एवं हरापन लिए पीले रंग के होते हैं। यह ताजा खाने एवं किशमिश बनाने के लिए उत्तम किस्म है। फलों में घुलनशील ठोस तत्व करीब 20–22 प्रतिशत तक पाई जाती है। यह किस्म बीमारियों के प्रति प्रतिरोधी है

तथा उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में जहां मानसून की पहले छुट–पुटवर्षा की समस्या है, उगाए जाने के लिए अति उपयुक्त है।

पूसा नवरंगः यह किस्म जूस बनाये के लिए उपयुक्त है, टेनटुरियर संकर किस्म है जिसमें गूदा, छिलका व रस गाढ़े लाल रंग के होते हैं। यह शीघ्र पकने वाली एवं काफी उपज देने वाली किस्म है। इसके गुच्छे मध्यम आकार, फल बीजु गोलाकर एवं गाढे काले लाल रंग के होते हैं। यह किस्म रंगीन पेय व मदिरा बनाने के लिए उपयुक्त है। यह ऐन्थ्रक्नोज रोग के प्रतिरोधी तथा पूर्वमानसून के आगमन पर दाने नहीं के बराबर फटते हैं। औषधीय गुणों से भी यह किस्म परिपूर्ण है।

पूसा अदिति : यह एक शीघ्र पकने वाली बीज रहित किस्म है।

पूसा त्रिसार : यह एक बीज रहित शीघ्र पकने वाली किस्म है।

पंजाब मैक्स पर्पल : यह एक रंगीन पेय व मदिरा बनाने योग्य किस्म है।

फ्लेम सीडलेसः यह एक कैलीफोर्निया से आयतित किस्म है। यह उत्तर भारत में उगाने के लिए उपयुक्त किस्म है। यह एक ओजस्वी, अधिक उपज वाली, लाल व गुलाबी दाने वाली किस्म है। दाने स्वाद युक्त (22–23 प्रतिशत मिठास) एवं आकर्षक होते हैं।

उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्र में अंगूर के खेती में की जाने वाली वार्षिक सस्य क्रियाएं चक्र

जनवरी के प्रथम से द्वितीय सप्ताह तकः परिपक्व बेलों की कुशल छंटाई व नवविकसित बेलों की सधाई। छंटाई उपरांत डॉमेक्स अथवा थायोयूरिया का छिड़काव। सड़ीगोबर की खाद को डालना।

जनवरी के तीसरे से चौथे सप्तह तकः प्रत्येक बेलों में उर्वरकों की पहली खेप का डालना व मिलाना। तुरन्त सिंचाई की व्यवस्था (सारणी देखे)। मुख्य तना पर छाल को उतारकर बोर्डोपेस्ट लगा देना चाहिए।

अप्रैल के पहले सप्ताहः फलों के बढ़वार के लिए पोटेशियम सल्फेट द्वारा उर्वरीकरण।

अप्रैल के दूसरे सप्ताह से तीसरे सप्ताह तकः उर्वरकों की अन्तिम खेप देना व नियमित सिंचाई। नियामकों का उपयोग।

मई के अन्तिम सप्ताह से जून के अन्त तकः सिंचाई में नियंत्रण एवं मानसूनी वर्षा से बचने के लिए फफूंदनाशक का छिड़काव (बाविस्टीन 2 प्रतिशत)

जुलाई–अगस्त–सितम्बरः नियमित सिंचाई, रोग एवं कीट का नियंत्रण।

नवम्बर–दिसम्बरः फफूंदनाशक (बाविस्टीन का एक से दो छिड़काव)। सिंचाई का 2 महिने रोका जाना।

व्यवसायिक फूलों मे रोग एवं कीट प्रबंधन

बबीता सिंह, ऋतु जैन एवं एस एस सिंधु
पुष्प विज्ञान एवं भू–दृश्य निर्माण संभाग,
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–12

फूलों का मानव जीवन से अति निकट का सम्बन्ध रहा है तथा जन्म से लेकर मृत्यु तक सभी संस्कारों तथा उत्सवों में फूलों की उल्लेखनीय भूमिका रहती है। रंग बिरंगे, सुगन्धित पुष्प जीवन में सुखद वातावरण का निर्माण करके प्रेरणा, स्फूर्ति तथा सृजनात्मक प्रवृतियों का विकास करते है। पुष्प उत्पादन एक बहुत ही लाभकारी व्यवसाय है क्योंकि पुष्प उत्पादन से प्रति यूनिट क्षेत्र से दूसरी खाद्यान फसलोंकी अपेक्षा अधिक आय मिलती है। फूलों की खेती पर अनुसंधान के साथ–साथ आवश्यक सुविधाओं का विकास एवं तकनीकों का मानकीकरण हुआ जिससे किसानों एवं उद्यमियों ने भी व्यापार हेतु फूलों की खेती को व्यवसाय के रूप में अपनाया है।

पुष्प उत्पादन में ताजे कटे फूल, खुले फूल, सूखे फूल तथा इनसे बने उत्पाद, कन्द, धनकन्द, गमलों में पौधे, सुगंधित एवं औषधीय उत्पाद, सुगंधित तेल, प्राकृतिक रंग, प्लग पौधे उत्पादन, संरक्षित खेती, बीज उत्पादन, ऊतक संवर्धन, नर्सरी आदि प्रमुख है। पुष्पीय फसलों को उगाने में अधिक देखभाल की आवष्यकता होती है। पुष्पीय फसलों में अधिक रोग पाये जाते हैं जिस कारण से बाजार में फूलों का कम मूल्य प्राप्त होता है जिससे कृषक को आर्थिक हानि होती है। भारत में पुष्प व्यवसाय एक उद्यम के रूप में विकसित हो रहा है। भारत वर्ष में विभिन्न प्रकार की पुष्पीय फसलों को उगाया जाता है। राष्ट्रीय एव अंतर्राष्ट्रीय बाजार में गुलाब का कर्तित पुष्पों में प्रमुख स्थान है। गुलदावदी एव गेंदे की भी घरेलू बाजार में मुख्य भूमिका है। इसके साथ ही साथ कंदीय पुष्पों में लिलियम, ग्लेडिओलस, रजनीगंधा का व्यवसायिक पुष्प उत्पादन में अहम स्थान रखता है।

सजावटी पौधों की मांग दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। गहन उत्पादन तकनीकों, नवीन प्रजातियों का उपयोग, फसल एकरूपता तथा एक ही फसल को कई वर्षो तक एक ही भूमि पर लगाने से रोग व्याधियों एवं कीटों के प्रकोप को बढ़ावा मिलता है। व्यवसायिक तौर पर पुष्प उत्पादन करने के लिए बीमारियों कीटों तथा उनके लक्षणों एव प्रबंधन की जानकारी आवश्यक है। इस संद्धर्भ में प्रमुख पुष्पीय फसलों के रोगों, कीटों तथा प्रबंधन के बारे में जानकारी देने का प्रयास किया गया है।

1) गुलाब के प्रमुख रोग, कीट एवं उनका प्रबंधनः

1.1) प्रमुख रोगः

1.1.1) डाइबैक या उल्टा सूखा रोग: गुलाब के पौधों में छँटाई होने के बाद इस रोग का प्रकोप होता है। यह रोग *डिप्लोडिया रोज़ेरम* नामक फफूंद से होता है। इसमें टहनियां ऊपर से नीचे की ओर सूखना शुरू कर देती हैं तथा पौधों का तना काला पड़कर मर जाता है। टहनियों में सूखे व स्वस्थ भाग के मिलने के स्थान पर भूरे रंग की धारियां बनती हैं एवं काली बिन्दुनुमा रचनायें इस स्थान पर दिखाई देती हैं।

उपचारः प्रभावित भाग को काटकर जला दें तथा कटे भाग पर चौबटिया पेस्ट (4 भाग कापर कार्बोनेट + 4 भाग रेडलेट + 5 भाग अलसी का तेल) या बोर्डो पेस्ट का लेप कर दें। उचित मात्रा में खाद–उर्वरक का प्रयोग तथा जल निकास का प्रबन्ध करें। 50 प्रतिशत कॉपर आक्सीक्लोराइड को 3 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें।

1.1.2) काला धब्बा (*डिप्लोकार्पन रोजेरम*) : नम मौसम में इस रोग का प्रकोप होता है। यह रोग *डिप्लोकार्पन रोज़ेरम* फफूंद के द्वारा होता है। इस रोग में पत्तियों की ऊपरी सतह पर काले धब्बे पड़ जाते हैं जो धीरे–धीरे बड़े हो जाते हैं, जिसके परिणामस्वरूप पत्तियां गिर जाती हैं।

फूलों पर संक्रमण होने पर फूल या तो गिर जाते हैं या खिलते ही नहीं।

प्रबंधनः इसके उपचार हेतु कटाई–छँटाई के बाद पत्तियां आने पर एक या दो छिड़काव कैप्टान (0.2 प्रतिशत) से 15 दिन के अन्तर से करें। पौधों की हल्की छटाई करनी चाहिए ताकि हवां का संवाहन अच्छा हो सके।

डाइबैक या उल्टा सूखा रोग

काला धब्बा रोग

1.1.3) पाउडरी मिल्ड्यू रोग : इसे खर्रा रोग के नाम से भी जाना जाता है । यह रोग *स्पारोथीका पननोसा* वार॰ रोजेरम नामक कवक के कारण होता है। मौसम में अचानक बदलाव तथा दिन मे अधिक गर्मी तथा रात में अधिक सर्दी से यह रोग लगता है। फफूँदी जनित इस रोग से पत्तियों, तनों और कलियों पर सफेद चूर्ण जैसा दिखाई देता है। रोगग्रस्त पत्तियां बैगनी रंग की हो जाती हैं और गिर जाती हैं। रोग के प्रकोप से फूल छोटे व कम संख्या में बनते हैं।

प्रबंधनः गुलाब की कटाई–छँटाई के समय सभी पत्तियों को काट दें, जिससे संक्रमण का स्रोत नष्ट हो जाये। पौधों पर रोग के रोकथाम हेतु घुलनशील गंधक (1 प्रतिशत) या केराथीन 0.1 प्रतिशत का घोल बनाकर 15 दिन के अन्तर पर छिड़काव करें।

पाउडरी मिल्ड्यू रोग (खर्रा)

1.2) प्रमुख कीटः

1.1.2) माहू (एफिड) –इस कीड़े का आक्रमण जनवरी–फरवरी में अधिक होता है। ये रंग में काला, हरापन लिये नन्हें कीट हैं। इसके शिशु और प्रौढ़ दोनों ही पौधों के मुलायम प्ररोह, कली और पुष्पों पर एकत्र हो कर कोशिकाओं से रस चूसते हैं। फलस्वरूप कोमल कलियां गिरने लगती हैं और फूल अपना सौन्दर्य खो देते हैं। इसके उपचार हेतु कीट दिखाई देते ही मैलाथियान अथवा रोगोर (1–2 मिली.) प्रति लीटर पानी में घोलकर 2 से 3 बार छिड़काव करें।

माहू (एफिड)

भृंग (चैफर बीटिल्स)

लाल मकड़ी कीट (रेड स्पाइडर माइट)

1.2.2) लाल मकड़ी कीट : इसे रेड स्पाईडर माईट के नाम से भी जाना जाता है । ये गुलाब का बड़ा विनाशकारी कीट है जिसका प्रकोप अगस्त–सितम्बर के महीने मे होता है। यह पत्तियों के नीचे, फिर सारी पत्ती एवं तने तथा अन्ततः पूरे पौधे पर जाल सा लगा देता है जिससे फूल बेचने योग्य नहीं रहता। इसकी रोकथाम के लिए मैलाथियान (1 मिली लीटर प्रति लीटर पानी) एव पैराथियान (2.5 मिली लीटर प्रति लीटर पानी) के घोल का छिड़काव अप्रैल मे तथा दूसरे घोल का छिड़काव अक्टूबर में करना चाहिए।

1.2.3) भृंग (चैफर बीटिल्स): अगस्त–सितम्बर मास में इनका प्रकोप अधिक होता है। प्रौढ़ भृंग रात में निकल कर पत्तियों को खाता है तथा तीव्र आक्रमण के समय पूरा पौधा पत्तिविहीन हो जाता है। इसके नियन्त्रण हेतु मोनोक्रोटोफास 1 मिलीलीटर या डाईमेथोएट 1.5 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी का छिड़काव करना चाहिए।

2) गैंदे के मुख्य रोग एवं उनका प्रबंधन :

2.1) मुख्य रोग

2.1.1) आर्द्र पतन : यह रोग '*राइजोक्टोनिया सोलानी*' के द्वारा होता है इस रोग में सूखे हुए भूरे धब्बे पड जाते है जो बाद मे अंकुरित तने की तरफ बढता है। जब पौध को उखाडते हैं तो जड तंत्र मे आधा या पूरा गलन नजर आता है। प्रभावित पौधशाला में बीजों का जमाव कम होता है और जमाव के बाद जमीन की सतह से लगा तना पतला और सवंमित हो गिर जाता है। बुआई से पूर्व बीज को कैप्टान 3.0 ग्राम या कार्बेन्डाजिम 2.5 ग्राम प्रति किग्रा0 बीज दर से शोधित कर लेना चाहिए।

2.1.2) काला सड़न (*फाइटोफ्थोरा स्पीसीज*): यह रोग बहुत से रोगाणुओं द्वारा होता है जिसमें राइजोक्टोनिया सोलानी तथा पिथियम प्रमुख है। यह रोग क्यारियों में लगे पौधे जो बढ़वार ले रहे हों, उनमें ज्यादातर होता है। इसकी रोकथाम के लिए भूमि को उपचारित करें तथा स्वस्थ पौध की रोपाई करें।

आर्द्र पतन रोग (विल्ट)

कॉलर सड़न रोग

2.1.3) पुष्प कालिका सड़न रोग: यह रोग *अल्टरनेरिया डाइऐन्थी* द्वारा होता है। मुख्यतरू यह रोग नई कलियों में पाया जाता है। इस रोग के फलस्वरूप कलियाँ सड़ जाती हैं। परिपक्व कलिका पर इसके लक्षण कम दिखाई देते है लेकिन ये कलिकांए खुलने मे असमर्थ होती है। इस रोग की रोकथाम के लिए डाइथेन एम0–45 का 0.2 प्रतिशत का छिड़काव करते रहना चाहिए।

2.1.4) पाउडरी मिल्ड्यू: यह रोग ओडियम प्रजाति कवक द्वारा होता है। पत्तियों की ऊपरी सतह पर पाउडर के समान छोटे–छोटे सफेद धब्बे पड़ जाते हैं जो बाद में सम्पूर्ण ऊपरी सतह पर फैल जाते हैं। इस रोग की रोकथाम के लिए कैराथेन (40 ई0सी0) के साथ घुलनशील सल्फर पाउडर का 0.5 प्रतिशत छिड़काव 15 दिनों के अन्तराल पर करते रहें।

पुष्पकलिका सड़न रोग

पाउडरी मिल्डियु रोग

2.2) प्रमुख कीट एवं प्रबंधन

2.2.1) लाल मकड़ी कीट: इसे रेड स्पाइडर माइट के नाम से भी जाना जाता है।यह कीट पुष्पण के समय दिखाई देता है। पौधे पर घूल सी नजर आती है। इस कीट को मेटासिस्टाक्स (25 ई.सी.) या रोगार या नुवान (40 ई.सी.) केराथेन 1 मिली./ प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव से इसे नियंत्रित किया जा सकता है।

2.2.2) रोयेंदार सूंडी (हेयेरी केटेरपिलर): यह कीट पत्तियों को खा जाती हैं । इसे नुवान या थियोडॉन के 1 मि॰ली॰ प्रति लीटर पानी में डालकर छिड़काव करने से नियंत्रित हो सकता है।

रोयेंदार सूंडी (हेयेरी केटेरपिलर)

लाल मकड़ी कीट (रेड स्पाइडर माइट)

3) ग्लेडियोलस के प्रमुख रोग एवं उनका प्रबंधन

3.1) फफूंदी रोग:

3.1.1) फ्यूरेजियम रॉट: यह ग्लैडियोलस का मुख्य रोग है। जो कि *फ्यूजेरियम आक्सीस्पोरम* स्पीशीज़ ग्लैडियोली से फैलता है। कन्दों पर भूरे रंग के धब्बे पड जाते हैं। पत्तियाँ ऊपरी भाग से पीली पड़ने लगती हैं तथा बाद में तना भी पीला पड़ जाता है फलस्वरूप पौधा सूखने लगता है।

नियंत्रण: बुवाई के लिये स्वस्थ कन्दों का प्रयोग करें। कन्दों का भण्डारण शुष्क एवं ठंडे स्थान पर 4–8 सेंटीग्रेड तापमान पर केवल एक तह बनाकर करें। कारबेन्डाजिम (0.1%) . मैन्कोजेब (0.25%) के घोल से कन्दों को उपचारित कर लें। एक ही स्थान पर ग्लैडियोलस की खेती तीन साल तक लगातार नहीं करनी चाहिए। लक्षण दिखाई देने पर कारबेन्डाजिम (0.1%) अथवा कैप्टान (0.3%) के घोल से मृदा को उपचारित करें।

फ्यूरेजियम रॉट रोग

3.1.2) कन्द सड़न: भण्डारण के समय कन्दों पर फफूंद से काले धब्बे पड़ जाते हैं जिससे पत्ते पीले पड़ जाते हैं और फूलों की डंडी भी छोटे आकार की होती है ।

नियंत्रण: भण्डारण के समय कन्दों को बाहरी चोट से बचायें। अधिक तापमान से कन्दों को बचाना चाहिए, अधिक आर्दता होने से कन्द जल्दी सडते हैं। बुआई से पूर्व कन्दों को कारबेन्डाजिम (0.1%) अथवा बाविस्टिन (2 ग्रा./ली. पानी) अथवा बोर्डो मिक्सचर (4:4:50) से उपचारित करें।

3.1.3) शुष्क या गलन रोग: यह जड़ सड़न रोग भी कहलाता है जो *क्लैरिटोनिया ग्लैडियोली* से फैलता है। भंडारित कंदों पर छोटे काले धब्बे और पत्तियों पर लगभग चकत्ते से दिखाई देते हैं। खेत में अधिक आद्रता वाली परिस्थितियों में यह अधिक घातक होते हैं पत्तियॉ उपर से नीचे तक भूरी हो जाती है और नीचे सतह पर सड़ जाती है (गला सड़न) लेकिन कंद तने से अच्छी तरह से जुड़ा रहता है।

नियंत्रण: कंदो का उपचार पहले ठंडे पानी में चौबीस घण्टे तक डुबोकर और फिर 30 मिनट तक गर्म पानी (54.5 डिग्री सेल्सियस) मे डुबोकर करते हैं ।

3.1.4) बोट्राइटिस ब्लाइट: इस रोग का प्रकोप भारत के मैदानी भागो मे फरवरी मार्च के महीने में ज्यादा देखा गया है। यह रोग *बोट्राइटिस स्पीसीज़* नामक कवक के द्वारा होता है। इस रोग के लिए ठंडा हवादार और नमी वाला मौसम अच्छा होता है। प्रारम्भ में कन्दों पर गहरे भूरे धब्बे बनते हैं जो बाद में पूरे कन्द पर फैलकर स्पंजी सड़न पैदा कर देता है। खेत में रोग का प्रकोप होने पर पत्ती की ऊपरी सतह पर विभिन्न आकार के स्लेटी.भूरे धब्बे बन जाते हैं। बाहरी पत्तियाँ पीली पड़कर सूख जाती हैं।

नियंत्रणः कन्दों को 0.2 प्रतिशत मैन्कोजेब पाउडर से शुष्क उपचारित करना चाहिए। खेत में रोग का प्रकोप होने पर बेनलेट 50 डब्लयू पी0 (0.1 प्रतिशत) या डाइथेन एम 45 (0.2 प्रतिशत) के घोल का सप्ताह में दो बार छिड़काव करें।

3.1.5) कर्बूलारिया ब्लाइटः यह *कर्बूलारिया ट्राइफोली* नामक कवक द्वारा फैलता है। यह अधिकतर गर्म आर्द्रता वाले मौसम में होता है। पौधे के सभी भाग जैसे पत्तियॉ, फूल, तना, कंद और जड़ इस रोग से ग्रसित होता है पत्तियों पर धब्बे शुरू में छोटे एवं गोल होते हैं जो बढ़कर लगभग 20 सें.मी. लम्बे जो जाते हैं यह धब्बे हल्के भूरे रंग के होते है और गहरे लाल भूरे रंग के छल्ले और पीली पत्ती से घिरे होते हैं।

नियंत्रणः इसके नियंत्रण के लिए डाइथेन एम–45 या ब्लाईटाक्स (0.2 प्रतिशत) का पन्द्रह दिन पर छिड़काव करें।

शुष्क या गलन रोग

बोट्राइटिस ब्लाइट रोग

कर्बूलारिया ब्लाइट रोग

3.2) जीवाणु जनित रोगः

3.2.1) बैक्टीरियल स्कैब ब्लाइट रोग : यह रोग *स्यूडोमोनास मार्जीनाटा* जीवाणु द्वारा फैलता है जिसके शुरू में लाल भूरे रंग के धब्बे पत्तियों पर दिखाई देते है जो बाद में गहरे भूरे रंग के हो जाते हैं । जब इसका प्रकोप अधिक होता है तब पत्तियॉ उपर से मुड़ना शुरू हो जाती है और नमी वाले मौसम में इसमें उतक क्षय शुरू हो जाता है। कन्दों पर काले भूरे धब्बे हो जाते है गर्म और आर्द्रता वाला मौसम इस रोग के लिए उपयुक्त है ।

रोकथामः कोई भी जीवाणुनाशक दवा इसके उपचार में उपयोगी नहीं पायी गयी है लेकिन साफ सफाई का अगर ध्यान रखें तो इस रोग को फैलने से रोका जा सकता है। बुवाई से पूर्व कन्दों को 0.1 प्रतिशत मरक्यूरिक क्लोराइड के घोल में डुबोना चाहिए।

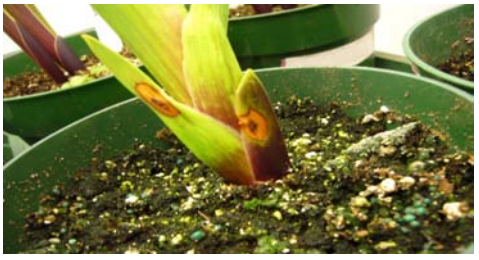

बैक्टीरियल स्कैब ब्लाइट रोग

3.3) विषाणु (वायरस) जनित रोगः

कवक एवं जीवाणु जनित रोगों के अलावा ग्लैडियोलस में बहुत सारे विषाणु जनित रोग भी लगते हैं जिनमें से मुख्यतः माहू तथा निमेटोड द्वारा फैलते हैं। माहू के द्वारा रोटिंग मोजैक तरह के विषाणु जैसे क्यूकम्बर मोजैक तथा येलो मोजैक विषाणु जब कि मृदा जनित विषाणु एरिंग स्पाट विषाणु जैसे टोबैको रिंग स्पाट तथा टोमेटो रिंग स्पाट विषाणुए ऐस्टर ऐलो विषाणु सामान्यतः लीफ हापर द्वारा फैलते हैं। इसके लक्षण विषाणु और पौधे पर निर्भर करते हैं जो कि सड़न, वृद्धि रोकने, फूलों के रंग बदलने, फूलों के मुड़ने, पत्तियों की सिकुड़न आदि को बढ़ावा देते हैं।

रोकथामः विषाणु रहित पौध सामग्री का प्रयोग करना लाभदायक होता है। मेरीस्टेम कल्चर के द्वारा अधिकतर विषाणुओं का उन्मूलन होता है और इसका महत्व उस जगह अधिक है जहॉ सम्पूर्ण पौध सामग्री विषाणु ग्रसित हो।

3.4) प्रमुख कीट

3.4.1) माहूँ (एफिड): यह छोटे गोल आकार के कीट होते हैं और इसके शिशु व प्रौढ़ दोनों ही पौधों की कोशिकाओं

से रस चूसते हैं। इसका प्रकोप फरवरी–मार्च के महीने में ज्यादा होता है जब मौसम हल्का गर्म होता है। इसके नियंत्रण हेतु मैलाथियन 50 ई0 सी0 या मेटासिस्टॉक्स 25 ई0 सी0 (15 मि॰ली॰ प्रति 10 लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए।

3.4.2) काष्ठ (थ्रिप्स): ये ऊतकों को कुरेद या खरोंच देते हैं जिससे कोशिकाओं में घाव बन जाते है। इन घावों से निकले रस को ये चूसते हैं। इनके आक्रमण से पत्तियों तथा फूलों पर भूरे रंग के चकत्ते पड़ जाते हैं। इसके नियंत्रण के लिए मेटासिस्टाक्स या रोगर 30 ई सी0 (2 मि॰ली॰ प्रति लीटर पानी) पानी में घोलकर छिड़काव करें।

3.4.3) सूत्रकृमि (निमेटोड): सूत्रकृमि की विभिन्न प्रजातियाँ भी ग्लैडियोलस की फसल के लिए हानिकारक साबित हो सकती है। इसका प्रकोप मुख्य रूप से बलुई मिट्टी व गर्म जलवायु में अधिक पाया गया है। इनके प्रकोप से पौधों की जड़ों में गांठें बनने लगती हैं। नियंत्रण हेतु कन्दों को 53^0 सेंटीग्रेड तापमान पर 30 मिनट के लिए गर्म पानी में उपचारित करना चाहिए। थीमेट @4–10 किग्रा0 प्रति हेक्टेयर प्रयोग करने से इसके नियंत्रण मे सफलता मिलती है।

माहूँ (एफिड)

काष्ठ (थ्रिप्स)

4) लिलियम के प्रमुख रोग, कीट एवं उनका प्रबंधन

4.1) प्रमुख रोग

4.1.1) कन्द सड़न: यह एशियाटिक प्रजातियों में पायी जाने वाली बहुत गम्भीर बीमारी है जो कन्दों को नष्ट कर पूरी फसल को बर्बाद कर देती है। ये बीमारी *फ्यूजेरियम आक्सीस्पोरम* नामक कवक के द्वारा फैलती हैं। इस कवक द्वारा पौधे के जमीन के अन्दर वाले भाग पर घॉव बन कर कन्द और नीचे तने पर संतरी धब्बे पड़ जाते हैं। परिपक्वता से पहले पत्ते पीले पड़ जाते हैं जो बाद में भूरे पड़कर झड़ जाते है और बाद मे तने के अन्दर तक इसका प्रकोप हो जाता है जो बाद मे पूरे भाग मे फैल जाते हैं।

रोकथाम: इस रोग से प्रभावित प्रजाति को नहीं उगाना चाहिए। पौधों की रोपाई से पूर्व भूमि को उचित फॅफूदीनाशक द्वारा उपचारित कर लेना चाहिए। कन्दों को डाइफोल्टान या बेन्जीमिडाजोल के घोल को 30 डिग्री0 से0 मे आधा घण्टा डुबोकर फफूंदीनाशक घोल से उपचारित करें।

4.1.2) बोट्राइटिस ब्लाइट: यह कवक रोग है जो कि बोट्राइटिस इलिप्टिका द्वारा ज्यादा नमी एवं गर्म तापमान वाले जगह पर फैलता है। इस रोग मे प्रथम लक्षण पत्तियों पर भूरे धब्बे दिखाई पडते हैं।

रोकथाम: रोग की रोकथाम के लिए फसल को दूरी पर लगाना चाहिए तथा खरवतवार को नियंत्रित करते रहना चाहिए। कटाई के पश्चात पौधे के सभी भाग जैसे सूखे तने एवं पत्तियों को खेत से निकालकर जला कर नष्ट कर देना चाहिए। रासायिनक उपचारों में कापर क्वकनाशी का छिड़काव बंसत ऋतु में करें। इस रोग की रोकथाम के लिए बेनलेट या बोर्डेक्स मिश्रण का 2 प्रतिशत घोल का छिड़काव करे।

कन्द सडन रोग

बोट्राइटिस ब्लाइट रोग

4.1.3) जड़ सडन: ये बीमारी मुख्यतः लिली मे पाई जाती है। ये *राइजोक्टोनिया सोलेनी* नामक फफूँदी से होती है। ये फफूंदीएनमी वाले वातावरण में 20–300 सेल्सियस तापमान पर मिलती है। इस बीमारी से पौधे के नीचे की पत्तियां मर जाती हैं।

रोकथाम: भूमि को बवाई से पहले उपचारित किया जाना चाहिए। गर्मी के महीनों में भूमि का उचित तापमान बनाए रखे। समय–समय पर कृषि क्रियायें करते रहना चाहिए।

4.1.4) तना सडन: तना सडन रोग *फाइटोप्थोरा कैक्टोरम* नामक कवक के द्वारा फैलता है। यह बीमारी तने की ठीक जमीन की सतह के नीचे आता है। पौधे बौने और पत्ते मुरझाये हुए लगते हैं और बाद मे मर जाते हैं। यह रोग ज्यादा नमी वाली जगह पर होता है निचले पत्ते पीले पड़ जाते हैं।

रोकथाम: लिली को फार्मलिन उपचारित मिट्टी में उगायें। उचित जल निकास का प्रबन्ध करें। गर्मियो के महीने मे मृदा तापमान को कम बनाए रखना चाहिए। रोग से प्रभावित पौधों को जमीन से उखाड कर फेंक देना चाहिए। बोर्डेक्स मिक्सचर या अन्य कॉपर फफूँदीनाशक का इस्तेमाल करना चाहिए ।

4.2) प्रमुख कीट:

4.2.1) चैंपा या माहू (एफिड): चैंपा लिली में पाए जाने वाला प्रमुख कीट है जो विषाणुजनित बीमारियां फैलाने में प्रमुख भूमिका निभाते हैं। इसके प्रभाव से पत्तियां मुड जाती हैं और ऊपर की पत्तियों के आकार मे बदलाव आ जाता है। विभिन्न प्रकार के कीटनाशी जैसे– मैलाथियान, पैराथियान (2 मि॰ली॰ प्रति लीटर पानी) का छिड़काव इनकी रोकथाम में सहायक होते हैं।

4.2.2) काष्ठ (थ्रीप्स): *लियोथ्रिप्स वेनेकी* एवं *टेनियोथ्रिप्स* सिम्पलैक्स नामक महत्वपूर्ण कीट है जो लिली के कन्दों को बहुत ही हानि पहुंचाते हैं।कन्दों के शल्क पर भूरे रंग के धब्बे पड जाते हैं जो बाद मे ढीले पड़कर कन्द से टूटकर अलग हो जाते हैं। प्रभावित कन्दों को रोपित करने पर उनकी वृद्धि नहीं होती है। इनकी रोकथाम के लिए कन्दों में मैलाथियान (1 मिली0 प्रति लीटर पानी) का छिड़काव उपयुक्त माना गया है। कन्दों को 10 डिग्री सेल्सियस के तापक्रम पर भण्डारित करना चाहिए। इन कन्दों को एक घंटे के लिए 43 डिग्री सेल्सियस तापक्रम वाले पानी में उपचारित किया जाना चाहिए।

4.2.3) सूत्रकृमि (निमेटोड): कंदीय पुष्प होने के कारण इनमें सूत्रकृमि का भी प्रकोप पाया जाता है। इनके कारण पौधों की वृद्धि रूक जाती है व पत्तियों पर पीले रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। इनकी रोकथाम के लिए कन्दों को फार्मलिन (2%) के घोल मे 43 डिग्री सेल्सियस तापमान पर 1 घंटे के लिए उपचारित करना चाहिए। प्रभावित कन्दों से जड़ों को काटकर कर अलग कर देना चाहिए। इनकी रोकथाम के लिए सूत्रकृमिनाशी जैसे कि वैपामए आक्सीमाइल ग्रेन्यूल या मिथाइल ब्रोमाइड को प्रयोग मे लाया जाना चाहिए।

चैंपाध् माहू (एफिड)

5) गुलदाउदी के प्रमुख रोग कीट एवं उनका प्रबंधन

5.1) प्रमुख रोग

5.1.1) जड़ सड़न: यह रोग पिथियम जाति, व फाइटोप्थोरा जाति की कवकों द्वारा फैलता है इस रोग में प्रभावित पौधे की जड़, तना, पत्ती अचानक सूख जाते हैं।

उपचार: उचित जलनिकास का प्रबन्ध होना चाहिए। थाइरम, कैप्टान या दोनों का मिश्रण 2.5 ग्राम/वर्ग मी0 की दर से मृदा को उपचारित करना चाहिए जो संक्रमण को रोकने में सहायता करते हैं। मेन्कोजेब, मेटालेक्सील और फोस्टील का उपयोग भी संरक्षण के लिए कर सकते हैं।

5.1.2) पर्ण धब्बा रोग: ये रोग *सेपटोरिया क्राइसेन्थीमेला* कवक के कारण होता है। इस रोग में मटमैले भूरे धब्बे पत्तियों पर दिखाई पड़ते हैं जो कि पीले धब्बों में परिवर्तित हो जाते हैं और अन्ततः पौधे की मृत्यु हो जाती है। जब फूल खिलना प्रारम्भ होते हैं उस समय कलियां सड़ने लगती हैं। यह रोग पौधे में नीचे से ऊपर की तरफ फैंलता है।

उपचारः 15 दिन के अन्तराल पर मैन्कोजेब का छिड़काव रोग को नियंत्रित करने में सहायता करता है। संक्रमित पत्तियों को जलाकर नष्ट कर देना चाहिए। कापर आक्सीक्लोराइड का छिड़काव (0.2 प्रतिशत) की दर से करना चाहिए।

5.1.3) झुलसा रोग (विल्ट): ये रोग *वर्टिसिलियम डहलि* फफूंद के कारण होता है। संक्रमित पौधे की पत्तियों का रंग पीले मटमैले रंग का हो जाता है एवं शाखाएँ या पूरा पौधा धीरे–धीरे सूख जाता है। इस रोग का कारण विभिन्न विकार और पानी की कमी हो सकते है।

उपचारः ग्रीष्म ऋतु में मृदा को काली पालीथीन से ढककर धूप में उपचारित करना चाहिए। मृदा को डाइथेन एम .45 (0.2 प्रतिशत) से उपचारित करना चाहिए।रोपाई से पहले कटिंग (कर्तन) को बेनोमाइल के घोल में डुबोकर उपचारित करना चाहिए। प्रतिरोधी प्रजातियों का उपयोग करना चाहिए।

5.1.4) रस्टः यह एक गम्भीर रोग है जो मुख्यतः प्रारम्भिक वसन्त ऋतु में होती है। पाक्सिनिया प्रजाति की कवक इस रोग के लिए उत्तरदायी होती है। पत्तियों की निचली सतह पर भूरे रंग के दब्बे पड जाते हैं। पौधे बहुत कमजोर हो जाते हैं और फूल खिलने में असफल रहते हैं।

उपचारः उचित साफ–सफाई रोग के संक्रमण को नियंत्रित करती है। प्रभावित पत्तियों को जल्दी ही तोड़ देना चाहिए। सल्फर और अन्य फॅफूदीनाशक जैसे जिनेब, कैप्टान आदि का पौधों पर बुरकाव करना चाहिए।

5.1.5) पाउडरी मिल्डयू (चुर्निल आसिता रोग): यह रोग *ओडियम क्राइसेन्थेमी* कवक के द्वारा होता है। इस रोग में पत्तियों पर पाउडर या आटे के जैसी परत दिखाई पड़ती है जिसके कारण पत्तियां गिर सकती हैं।

उपचारः प्रभावित पौधों में सल्फर कवकनाशी या कारबेन्डाजिम का उपयोग करना चाहिए।

5.1.6) गुलदाउदी स्टंट (गुलदाउदी स्टंट वायरोइड): पौधे का आकार अपनी सामान्य वृद्धि से आधा रह जाता है। पत्तियां पीली पड़ जाती हैं तथा उनका आकार छोटा हो जाता है। फूल पूर्ण विकास से पूर्व खिल जाते है तथा आकार मे छोटे होते हैं। गुलदाउदी की कुछ क़िस्मों मे पत्तियों पर चित्तिदार धब्बे पड़ जाते हैं। यह रोग पिन्चिंग (शीर्ष नोचन) के दौरान फैलता है।

उपचारः विषाणु (वाइरस) रहित कंटिग (कर्तन) का उपयोग/प्रयोग करना चाहिए।

जड़ सड़न रोग पर्ण धब्बा रोग झुलसा रोग

रस्ट रोग पाउडरी मिल्डयू रोग

5.2) प्रमुख कीट

5.2.1) माहू (एफिड): यह छोटे हरे–काले रंग के बिन्दी जैसे कीट होते हैं जो कि बड़ी संख्या में दिखाई देते हैं। ये कीट मुलायम भागों जैसे कली, छोटी पत्तियों, मुलायम तनों का रस चूस लेते हैं। प्रभावित फूल की कलियां खिलने में असफल रहती हैं एवं खिलने से पहले ही सूख जाती हैं। यह कीट दिसम्बर एवं फरवरी–मार्च माह मे अधिक क्षति पहुँचाता है। इसकी रोकथाम के लिए 15 दिन के अन्तराल पर मोनोक्रोटोफास (1 मिली लीटर प्रति लीटर पानी) या

माहू (एफिड) (माइटस) पत्ती

सुरंग कीट (लीफ माइनर)

मैलाथियान (1 मिली लीटर प्रति लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए।

5.2.2) माइटस: ये बहुत ही छोटे बिन्दु जैसे लाल रंग के कीट हैं जो पत्तियों की निचली सतह पर मुख्यतः गर्मियों में दिखाई देते हैं। प्रभावित फूल की कलियां खिलने में असफल रहती हैं और खिलने से पहले ही सूख जाती हैं। 15 दिन के अन्तराल पर डाइकोफॉल या वर्टीमैक अथवा पैण्टेक (5 मि॰ली॰ प्रति 10 लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए।

5.2.3) पत्ती सुरंग कीट (लीफ माइनर): इसका प्रभाव मार्च और जून के दौरान होता है यह कीट पॉली हाउस में ज्यादा विनाशकारी होता है। इसके छोटे कीट डिम्भ पत्ती की निचली सतह और उपरी सतह के बीच सुरंग बना देते हैं। अत्याधिक प्रभाव के कारण पत्तियां सम्पूर्ण रूप से सूख जाती है और गिर जाती है।

उपचार: प्रभावित पत्तियों को तोडकर नष्ट कर देना चाहिए। प्रभावित पौधों पर मोनोक्रोटोफॉस एवं ट्राइजोफॉस (5 मि॰ली॰ प्रति 10 लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए।

5.2.4) पत्ती मोड़क कीट (लीफ फोल्डर): सभी इल्ली अवस्थाएं पौधे को प्रभावित करती हैं। रेशमी धागे की सहायता से इल्लियां पत्तियों को मोड़ देती हैं और पत्तियों को अन्दर से खाना प्रारम्भ कर देती हैं।

उपचार: 15 दिन के अन्तराल पर साइपर मैथ्रिन, डीकैम थ्रीन (2 मि॰ली प्रति 10 लीटर पानी) अथवा क्यूनॉलफॉस (5 मिली लीटर प्रति 10 लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए।

6) रजनीगंधा के प्रमुख रोगए कीट एवं रोकथाम:

6.1) कवक जनित रोग:

6.1.1) तना विगलन: ये रोग *स्कैलेरोशियम रालफसी* नामक कवक के द्वारा उत्पन्न होता है। इस रोग में पत्तियों के ऊपर गहरे भूरे रंग के धब्बे पड़ जाते हैं तथा ग्रसित पत्तियां सड़कर गिर जाती हैं। जिसके कारण पौधों की वृद्धि रुक जाती है एव पौधे की पुष्प उत्पादन क्षमता नष्ट हो जाती है। इस रोग की रोकथाम के लिए ब्रासीकोल अथवा जिनेब (20%) @ 30 कि॰ग्रा॰ प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए। इस बीमारी को कम करने के लिये मृदा की नमी को कम करना चाहिए अथवा बल्ब की रोपाई अधिक दूरी पर करनी चाहिए।

6.1.2) पुष्प कलिका सड़न रोग: यह बीमारी *इरवीनिया स्पीशीज़* द्वारा होती है जिससे कली मे काले भूरें धब्बें पड़ कर सूख जाती है। इसकी रोकथाम के लिए रोग ग्रस्त पौंधों को उखाड़ कर नष्ट कर देना चाहिए। इस बीमारी के रोकथाम के लिये स्ट्रेमाइसिन (0.01%) का प्रयोग करना चाहिए।

6.2) प्रमुख कीट: रजनीगंधा की फसल पर चैंपा (एफिट प्रजातियां), काष्ठ (थ्रिप्स सिम्पलैक्स) तथा सूंडी कीटों का सर्वाधिक प्रकोप होता है चैंपा ओर काष्ठ कीटों की रोकथाम करने के लिए फसल पर केलथिन (डाइकोफिल), डाइमेथोएट, (रोगोर) अथवा आक्सीडेमेटोन मिथाइल (मेटासिस्टॉक्स) कीटनाशियों को 1.5 से 2.0 मि॰ली॰ प्रतिलीटर की दर से पानी में घोल बनाकर फसल पर छिड़काव करना चाहिए। सुडियों को नियन्त्रित करने के लिए फसल पर पाराथिओन (1.00 मि.ली./लीटर) के घोल का छिड़काव करना लाभप्रद रहता है।

7) कारनेशन के प्रमुख रोग एवं उनका प्रबंधन

7.1) प्रमुख रोग:

7.1.1) फ्युजेरियम सड़न: यह एक विध्वसंक रोग है, जिसका कारक ''*फ्युजेरियम आक्सीस्पोरम* एफ डाइएन्थी'' है। यह रोग गर्मी के दिनों में होता है। इस रोग के कारण

तना और पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं तथा बाद में मुरझाकर सूख जाती हैं।

नियंत्रणः

1. प्रतिरोधी प्रजातियों का प्रयोग करना चाहिए।
2. उचित फसल चक्र अपनाएं।
3. कारबेन्डाजिम (0.1%) या वावस्टीन (0.15%) के घोल से भूमि में ड्रेन्चिग करें।
4. कारनेशन के पौधों पर डाईथेन एम0 45 (0.1 प्रतिशत) और बावस्टिन (0.1 प्रतिशत) का 15 दिन के अन्तराल पर स्प्रे करना चाहिए।

7.1.2) भूरा रतुआ रोगः इस रोग का कारक यूरोमायासिस डाइएन्थी'' है। यह पौधे की शक्ति तथा कर्तित फूलों की गुणवत्ता में कमी लाता है। प्रारम्भिक संक्रमण के समय पीले हरे रंग की सूजन पौधे के विभिन्न भागों में दिखाई पड़ती है जो बाद में लाल और गाढ़े भूरे रंग के चूर्ण (पाउडर) के रूप में दिखाई पड़ते हैं। 10 से॰मी॰ आकार के पोस्ट्यूल पत्तियों, तने और पुष्प कलियों पर बनते हैं। अत्यधिक संक्रमण होने के कारण पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं और सूख जाती है। गर्म व नम दशा इस रोग के फैलने में सहायक होते हैं।

नियंत्रणः

(1) मृदा मे अच्छी प्रकार का जल निकास का प्रबन्ध होना करना चाहिए।

(2) रोगी पौधों को नष्ट कर देना चाहिए।

(3) मेन्काजेब अथवा जिनेब (0.2%) का छिड़काव करना चाहिए।

7.1.3) राइजोक्टोनिया तना सड़नः यह मृदा जनित रोग है जो कि बहुत जल्दी पौधों को प्रभावित करता है। यह रोग ''*राइजोक्टोनिया सोलेनाई*'' फफूँदी के कारण होता है। संक्रमित पौधों में शुरू से पीलापन लेते हुए तने के निचले भाग पर पानी के धब्बे दिखाई पड़ते हैं तथा सड़न प्रारम्भ हो जाता है। यह बीमारी गर्म एवं नम स्थिति में ज्यादा फैलती है।

नियंत्रणः

(1) मृदा को निष्कृत (sterilization) करना चाहिए।

2) संक्रमित पौधों को नष्ट कर देना चाहिए।

(3) कार्बेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत) या थाईरम (0.2 प्रतिशत) डाईथेन एम0 45 (0.2 प्रतिशत) के घोल से भूमि में ड्रेन्चिग करें।

7.1.4) फाईटोपथोरा तना सड़नः यह रोग फाईटोपथोरा जाति के कारण होता है। इस रोग में पत्तियाँ पीली हो जाती हैं, तने का बाहरी भाग भूरा तथा गाँठें अन्दर से भूरी हो जाती हैं। अत्यधिक संक्रमण के कारण तना तथा जड़ सड़ जाता है। नमी या अधिक आर्द्रता एंव जलभराव वाली मृदाओं में यह रोग फैलता है।

नियंत्रणः

(1) खेत में पानी न भरने दें।

(2) संक्रमित अंगों को नष्ट कर देना चाहिए।

(3) पौधों को संक्रमण से बचाने के बेनोमाइल या बेनिलेट (2.5 ग्राम प्रति लीटर की दर से) का छिड़काव करना चाहिए।

7.2) प्रमुख कीट

7.2.1) लाल–मकड़ी कीट ;रेड स्पाइडर माइट): यह कीट पत्ती के निचले हिस्से को खाते हैं तथा रस को चूसते हैं, जिसके कारण पत्तियाँ पीली पड़ जाती हैं एवं जाल जैसी संरचना बन जाती है। माइट अधिकतर पौधे के निचले हिस्से पर आक्रमण करती हैं। गर्म दशा में यह कीट ज्यादा आक्रमण करते हैं। इनके नियंत्रण हेतु खरपतवार का पूर्ण नियंत्रण रखना चाहिए तथा रोकथाम के लिए क्लोरोफेनापाइरोट 50–100 ग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से देना चाहिए।

7.2.2) माहू (एफिड): एफिड (*माईजस परसीकी*) कारनेशन के महत्वपूर्ण कीटों में से एक है। यह विषाणु रोगों के वाहक भी होते हैं। हरे रंग के छोट–छोटे कीट झुंड में नई शाखाओं व फूल की कली पर पाये जाते हैं जो रस चूसकर पौधे को हानि पहुँचाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए खरपतवार का पूर्ण नियंत्रण रखना चाहिए क्षतिग्रस्त

भाग को नष्ट कर देना चाहिए तथा दस दिन के अंतराल पर रोगोर मेलाथियान (2 मिली./लीटर) या नूवान (1.5 मिली0 प्रति लीटर की दर से) का छिड़काव करना चाहिए।

माहू (एफिड)

8) जरबेरा के प्रमुख रोग ए कीट एवं उनका प्रबंधन

8.1) प्रमुख रोगः

8.1.1) पाउडरी मिल्ड्यू: यह रोग '*इरीसीफो सिकोरेसिएरम*' फफूंद के कारण होता है। इसमें पत्तियों पर सफेद पाउडर की परत सी बन जाती है तथा बाद में पत्तियाँ पीली पड़कर सूख जाती हैं।

नियंत्रणः पौधों को बूँद–बूँद सिंचाई विधि द्वारा सिंचित किया जाना चाहिए जिससे पौधों को अत्यधिक आद्रता से बचाया जा सके। प्रभावित पौधों व पत्तियों को नष्ट कर देना चाहिए। फेनेरीमोल (0.5 मिली0 प्रति लीटर) या डयनोकेब (0.3 मिली0 प्रति लीटर) का छिड़काव करना चाहिए।

8.1.2) कालर रॉटः यह व्याधि *फाइटोप्थोरा क्रिप्टोजिया* नामक फफूंद के कारण उत्पन्न होती है । यह बीमारी मिट्टी की सतह पर तने के निचले हिस्से पर होती है। कुछ पौधों के पत्तियां पीली पड जाती हैं और पूरा पौधा सूख जाता है।

नियंत्रणः मिट्टी को मेटालेक्सल या कवकनाशी जैसे केप्टान और कापर आक्सीक्लोराइड के (2.0 मिली. मात्रा प्रति ली. पानी मे) घोल बनाकर मिट्टी को अच्छी तरह से तर कर देना चाहिए।

8.1.3) जड़ सड़नः यह रोग को कवकों द्वारा जैसे *पीथियम, इरेगुलैटे,* तथा *राइजोक्टोनिया सोलेनी* द्वारा फैलता है जो जरबेरा के जड तन्त्र को प्रभावित करता है।

नियंत्रणः रोपाई के पूर्व मिट्टी को उपचारित कर लेना चाहिए। इसके लिए कॉपर आक्सीक्लोराइड की 2 मिली. / ली. पानी मात्रा द्वारा इस रोग को नियत्रित किया जाता है।

8.2) प्रमुख कीटः

8.2.1) पत्ती सुरंग कीट (लीफ माइनर): यह कीट पौधों की पत्तियों पर आड़ी–तिरछी सुरंगें बना देते हैं, जिसकी वजह से पत्तियाँ हल्की पीली से भूरे रंग की हो जाती है। नियंत्रण हेतु प्रभावित पौधों को नष्ट कर देना चाहिए तथा साइपरमेथ्रीन (0.5–0.75 मिली0 प्रति लीटर) या डाइक्लोवोस (0.5–1.8 मिली0 प्रति लीटर) को पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिये।

8.2.2) माहू (एफिड): हरे रंग के छोटे–छोटे कीट झुण्ड में नई शाखाओं व फूल की कली पर पाये जाते हैं जो रस चूसकर पौधों को हानि पहुँचाते हैं। इसका नियंत्रण मेटासिस्टॉक्स (1 मिली0 प्रति लीटर) तथा पैराथिओन (2मिली0 प्रति लीटर) का छिड़काव करके किया जा सकता है।

माहू (एफिड)

पत्ती सुरंग कीट (लीफ माइनर)

माइट्स

8.2.3) माइट्सः यह छोटे–छोटे भूरे रंग के कीट होते हैं जो प्रायः नंगी आँखों से दिखायी नहीं देते हैं। ये पत्तियों की निचली सतह पर रहते हैं। पत्तियों का रस चूसकर धब्बे जैसे बनाते हैं अधिक माइट लगने पर पत्तियों पर जाला बनाते है। गर्म व सूखे स्थान पर इनका प्रभाव ज्यादा होता है। इनका नियंत्रण डाइकोफाल (1.5 मिली. प्रति लीटर) के छिड़काव द्वारा किया जा सकता है।

8.2.4) काष्ठ (थ्रिप्स): भूरे रंग के, पंखों वाले चींटी की तरह दिखने वाला अति सूक्ष्म कीट है। यह कीट पौधों की मुलायम शाखाओं, पत्तियों तथा फूलों की कली का रस चूसते हैं, जिससे मटमैले भूरे रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। डाइकोफाल 2.0 मिली0 प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव कर थ्रिप्स पर नियंत्रण कर सकते हैं।

लाभदायक कृषि के लिये उन्नत कृषि यंत्र एवं तकनिकी

सतीश देवराम लांडे, इन्द्र मणि एवं पी के साहू
कृषि अभियांत्रीकी संभाग
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

कृषि उत्पादन बढ़ाने में कृषि यंत्रीकरण का बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान है । उन्नत कृषि यंत्र एवं तकनिकी से कृषि के कार्यों को कम समय में और अधिक कुशलता से किया जा सकता है। कृषि अभियंत्रीकी संभाग ने उन्नत कृषि यंत्र एवं तकनिकी का इजाद किया है जिनकी मदद से बीज और उर्वरक जैसे संसाधनों की लागत कम किया जा सकता है।

पूसा एक्वा फर्टी सीड ड्रिल एवं हाइड्रोजेल एप्लीकेटर

बारानी क्षेत्रों में रबी की फसलों जैसे गेहूँ, चना, सरसों आदि की समय पर बुवाई के लिए पूसा एक्वा फर्टी सीड ड्रिल मशीन का आविष्कार किया गया है। यह मशीन बुवाई के समय एक सामान उर्वरक घोल को बीज के पास स्थापित कराती है जिससे बीज के अंकुरण और पौधे के प्रारंभिक विकास में उपयोगी साबित होती है। पूसा एक्वा फर्टी सीड ड्रिल से उचित मात्रा में बीज, उर्वरक के साथ अंकुरण के लिए पानी को भी दिया जाता है। इस तरह एक ही कतार में बीज, उर्वरक घोल और पानी को स्थापित किया जाता है, जिसकी वजह से शुरुवाती समय में खरपतवारों का संक्रमण रोका जाता है और अंकुरण में वृद्धि होती है। गेंहूँ की फसल में एक्वा फर्टी सीड ड्रिल की मदद से अंकुरण में 53 प्रतिशत तथा उपज में 35 प्रतिशत बढ़ोतरी देखी गई । यह मशीन चना, मूंग, मटर, सरसों जैसी दलहनी, तिलहनी फसलों के बीजों की क़तार में बुवाई के साथ साथ उचित गहराई में स्थापित करने में कारगर है। पूसा हाइड्रोजेल एप्लीकेटर एक्वा फर्टी सीड ड्रिल के साथ जोड़ी जाती है, जिससे बीज और हाइड्रोजेल के दानों को सटीक यांत्रिक तरीके से बोया जाता है साथ ही नमी, उर्वरक, बीज और हाइड्रोजेल का सही वितरण होता है। नमी की कमी के अवस्था में हाइड्रोजेल पोंधो को धीरे–धीरे जल उपलबध करता है। यह मशीन 45 अश्वशक्ति के ट्रेक्टर से चलाई जाती है और इसकी कार्यक्षमता 0.25 हेक्टर प्रति घंटा है।

पूसा एक्वा फर्टी सीड ड्रिल अनुमानित लागत रू.1,21,716/–

हाइड्रोजेल एप्लीकेटर अनुमानित लागत रू. 28,750/–

गाजर प्लांटर एवं गाजर हार्वेस्टर

गाजर प्लांटर, बीज को 20 से.मी. ऊँची बैड पर निश्चित दुरी पर बोने के लिए उपयोगी है। ऊँचीं बेड़ों पर मशीन से बोने से अधिक उत्पादन व अच्छी पैदावार मिलती है इससे सिंचाई के पानी की भी बचत होती है साथ–साथ खरपतवार प्रबंधन आसान हो जाता है। बैड की उपरी और निचली सतह की चौड़ाई क्रमशः 350 मी.मी. व 700 मी. मी. रखते है । बैड पर गाजर के बीज रोपण 75 मि.मी. X 50 मि.मी. की दुरी पर किया जाता है व औसतन बीज की गहराई 2.25 से.मी. राखी जाती है। इस मशीन से प्रत्येक बैड पर चार कतार में बुआई की जाती है । कतार से क़तर के बीच के अंतर को व्यवस्थित भी किया जा सकता है । इस मशीन की कार्य क्षमता 0.5 हेक्टर प्रति घंटा है।

प्रचलित गाजर की हार्वेस्टिंग आम तौर हाथ से खींचकर या खुरपा/ कुदाल से खोदकर की जाती है। बैड पर बोई गई गाजर को बिना नुकसान के निकाल ने के लिए गाजर हार्वेस्टर का विकास किया गया है। इस मशीन से

बिना टूटे व नुकसान के गाजर निकलने में मदद मिलती है। दूसरी तरफ समय से व उत्तम गाजर की हार्वेस्टिंग से किसान को बाजार से अच्छी कीमत मिल सकती है क्योकि गाजर बाजार में जल्दी आ जाती है। हार्वेस्टर में एकल कटाई ब्लेड 15 डिग्री के कोन के साथ हितचिंग फ्रेम सयोजन से जोड़ा गया है। गाजर हार्वेस्टर का कटाई ब्लेड गाजर के निचे जाता है एवं दो बेड़ों की मिटटी को एक साथ खोलता है। बेड़ों से निकाली गई गाजर को हाथ से उठाया जाता है। कटाई ब्लेड द्वारा खोली मिटटी की वजह से गाजर को निकलने में आसानी होती है। गाजर हार्वेस्टर से 1.3 मी. चौड़ी बैड से गाजर निकाली जाती है। इसे चलाने के लिए 45 अश्वशक्ति के ट्रेक्टर की आवश्यकता होती है। इसकी हार्वेस्टिंग क्षमता प्रतिशत है। इस मशीन की कार्य क्षमता 0.35 हेक्टर प्रति घंटा है।

गाजर प्लांटर
अनुमानित लागत रू. 86,250/–

गाजर हार्वेस्टर
अनुमानित लागत रू. 28,750/–

लहसुन प्लांटर एवं हार्वेस्टर

लहसुन की बुवाई अधिकतर हाथ से कराई जाती है। मशीन के प्रस्तुतीकरण से समय से कार्य, अधिक उपज व प्रभावी बीज उपयोग में मदद मिल सकती है। यह मशीन बड़े स्तर लहसुन की खेती में मददगार है । इस मशीन से समतल जमीन में नौ कतारो में लहसुन के बीज को 15 से.मी. की दुरी पर बोने के लिए विकसित किया गया है। इस मशीन से कार्य करने पर फीड सूचक गुणवत्ता 88 प्रतिशत, चूक सूचक 2.0 प्रतिशत व बहुलता सूचक 10 प्रतिशत है इसे चलाने के लिए 35 अश्व शक्ति के ट्रैक्टर की आवश्यकता होती है। इस मशीन की कार्य क्षमता 0.27 हेक्टर प्रति घंटा है।

लहसुन की खुदाई व बीच में एक लाइन में एकत्रित करने के लिए इस मशीन को विकसित किया गया है। इस मशीन में दो मुख्य इकाईयों, खुदाई ब्लेड (300 x 600 x 12 मी.मी.) और मिट्टी अलगाव इकाई (1000 x 650 मी. मी.) है। इसकी प्रति दिन कार्य क्षमता 1.9 हेक्टर है। इस मशीन से लहसुन की हार्वेस्टिंग 96 प्रतिशत पायी गई। इस मशीन से मानव– घटा तथा कार्य लगत में पारम्परिक बिधि की तुलना में बहुत अधिक बचत होती है।

लहसुन प्लांटर
अनुमानित लागत रू. 41,924/–

लहसुन हार्वेस्टर
अनुमानित लागत रू. 11,592/–

न्युमेटिक प्रिसिजन बुआई यन्त्र

न्युमेटिक प्रिसिजन बुआई यन्त्र एक बुआई का अत्याधुनिक एवं सटीक यन्त्र है जिसकी मदद से छोटे बीज वाली सब्जियों जैसे पत्तागोबी, फूलगोभी तथा पालक की समतल खेत या मेंढ़ पर बुवाई की जा सकती है। यह मशीन सब्जियों की व्यावसायिक खेती करके; कृषि आय बढ़ने एवं ग्रामीण अंचल में कुपोषण से लड़ने में सहायक है। इस मशीन के इस्तेमाल से बीज ज़माने में एकरूपता आती है साथ ही साथ एक समय पर फसल तैयार होने में मदद मिलती है जिससे आर्थिक उत्पादन और आय में बढ़ोतरी होती है । न्युमेटिक प्रिसिजन बुआई यन्त्र की कार्य क्षमता 0.2–0.3 हेक्टर प्रति घंटा है तथा इस मशीन को मध्यम आकर के ट्रैक्टर से चलाया जा सकता है ।

न्युमेटिक प्रिसिजन बुआई यन्त्र
अनुमानित लागत रू. 3,50,000/–

ट्रैक्टर चालित भिंडी का बुवाई यन्त्र

यह ट्रैक्टर चालित बुवाई यन्त्र भीगे हुए भिंडी के बीज को डौल पर बोने के लिए उपयुक्त है जिसे ट्रैक्टर के 3–पॉइंट योजक प्रणाली के द्वारा जोड़ा जाता है। इस मशीन में बीज बक्सा, बीज निर्धारण इकाई, डौल बनाने की इकाई फ्रेम, तथा जमीनी पहिया है। इस मशीन में तीन बक्से लगे है और प्रत्येक बक्से में बीज निर्धारण इकाई का प्राविधान किया गया है जिसमें नत–प्लेट का प्रयोग किया गया है। हर एक प्लेट में आठ कोष्ठक इस प्रकार बने है कि उनमें 2–2 बीज आ जायें। इस तरह से बीजाई के बाद खेत में कोई जगह रिक्त नहीं रहती। इस मशीन कि मदद से बीजों को डोलों पर सुनियोजित माप और गहराई में गिराया जाता है। लगभग 5 घंटो में एक हेक्टर खेत कि बुवाई की जा सकती है ।

ट्रैक्टर चालित भिंडी का बुवाई यन्त्र
अनुमानित लागत रू. 80,000/–

मेड़ों पर गेंहूँ बुवाई यन्त्र (Raised Bed Planter)

यह यन्त्र मेड़ों पर गेहूँ की बुआई के लिए विकसित किया गया है। प्रचलित सीड ड्रिल द्वारा समतल भूमि में बुवाई करने की तुलना में इस विधि द्वारा बुवाई करने पर उपज में 5–10 प्रतिशत तक की वृद्धि होती है तथा लगभग 25–30 प्रतिशत बीज और खाद की कम खपत होती है। इसके द्वारा सिचाई के लिए 30–35 प्रतिशत तक काम पानी की आवश्यकता होती है। फसल के गिराने की संभावना भी कम रहती है। यह यन्त्र अच्छी जुती हुई भूमि पर एक बार में ही मेड़ें बनाकर उन पर बीज तथा खाद की बुवाई और मेड़ों की सही आकर में रखने का कार्य करता है यह दो मेड़ों पर छह लाइनों में बुवाई करता है। यह ट्रेक्टर चलित यन्त्र है, इस को 35–45 हॉर्स पावर के ट्रेक्टर से चलाया जा सकता है। इसकी कार्य क्षमता 0.2 हैक्टर प्रति गहनता है। यह यन्त्र मेड़ बनाए के लिए रीगर लगे होते हैं। बीज को नियमित तथा निर्धारित मात्रा में डालने के

मेड़ों पर गेंहूँ बुवाई यन्त्र
अनुमानित लागत रू.1,00,000/–

लिए फ्लूटेड रोलर लगे होते हैं। खाद को कप के आकर वाले रोटर द्वारा गिराया जाता है। मेड़ों को समतल तथा वंचित आकर देने के लिए एक बेड शेपर मुख्य यन्त्र के पीछे लगा होता है।

ट्रैक्टर चलित प्याज खुदाई यन्त्र

प्याज के बल्ब की खुदाई हेतु ट्रैक्टर चलित प्याज खुदाई यन्त्र को विकिसत किया गया है। इस यन्त्र की मदद से गिरी हुयी फसल को उठाना, बल्ब की खुदाई करना, खुदे हुए बल्ब को उठाना और अंततः फसल को मिट्टी से अलग करके कतार में रखना है। मिट्टी की खुदाई के लिए इस मशीन में 1.0 मीटर लम्बाई वाले V– आकृति वाली ब्लेड का उपयोग किया है। जो की 15 डिग्री ढाल अनुसंशित किया गया। प्याज खुदाई यन्त्र को 45 अश्वशक्ति वाले ट्रैक्टर द्वारा चलाया जा सकता है। इस मशीन की क्षेत्र क्षमता लगभग 0.32 हेक्टर प्रति घंटा है और अधिकतम खुदाई दक्षता 93 प्रतिशत है।

ट्रैक्टर चलित प्याज खुदाई यन्त्र
अनुमानित लागत रू.1,72,500/–

अनार के उभरते जड़ गाँठ सूत्रकृमि का प्रबंधन

चंद्रमणी वाघमारे एवं विकास बामेल
सूत्रकृमि विज्ञान संभाग,
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

जड़ गॉठ सूत्रकृमि (*मेलोइडोगाइन इनकॉग्निटा*) भारत में कई बागवानी और सजावटी फसलोंका एक उभरता हुआ और विनाशकारी सूत्रकृमि परजीवी है। इस सूत्रकृमि का प्रकोप मुख्य रूप से अनार की नर्सरी और मुख्य खेत में भी होता है। अनार की नर्सरी या खेत रोपण सामग्री के परिवहन के दौरान गंभीर रूप से प्रभावित होते हैं; सूत्रकृमि से प्रभावित पेड़ पीले, सूखे और रूखे पेड़ों को प्रदर्शित करते हैं। अलग–अलग पौधे की जड़ प्रणाली विशिष्ट कठोर बड़े जड़ गांठ दिखाती है। प्रबंधन दृष्टिकोण में सूत्रकृमि प्रतिरोधी स्रोत का चयन, यदि उपलब्ध हो, गैर–होस्ट या खराब मेजबान फसलों के साथ मुख्य क्षेत्र में उपयुक्त फसल चक्र को अपनाना, नर्सरी बढ़ाने के लिए सूत्रकृमि मुक्त क्षेत्रों का चयन, मिट्टी के सौरकरण द्वारा नर्सरी क्षेत्रों का कीटाणुशोधन, बीज और मिट्टी के उपचार शामिल है।

अनार (*पुनिका ग्रेनाटम* एल.) पुनीकेसी परिवार से संबंधित है, उष्ण कटिबंधिय और उपोष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों के महत्वपूर्ण पसंदीदा खाद्य तालिका फलों में से एक है। विश्व स्तर पर लगभग 50% हिस्सेदारी के साथ भारत सबसे बड़ा उत्पादक है।यह लगभग 3034 हजार मीट्रिक टन के कुल उत्पादन और 10.27 टन/हेक्टेयर की उत्पादकता के साथ 262 हजार हेक्टेयर क्षेत्र में उगाया जाता है। देश में महाराष्ट्र राज्यकुल रकबे के 2/3 पर कब्जा करने वाला सबसे बड़ा उत्पादक है, इसके बाद गुजरात, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, राजस्थान और तेलंगाना का स्थान है। पिछले 8 वर्षों में अनार की खेती के रकबे में 133.39% की वृद्धि हुई है। यह अपने अम्लीय मीठे फलों के लिए व्यावसायिक रूप से उगाया जाता है, जिसका उपयोग मुख्य रूप से रेगिस्तानी उदेश्यों के लिए किया जाता है। इसका कैलोरी मान 77 किलो कैलोरी/100 ग्रा. खाने योग्य भाग है। इस तरह की एक महत्वपूर्ण फल फसल पर कई कीड़ों के साथ–साथ रोगजनक रोगों द्वारा हमला किया जाता है। सूत्रकृमि के कारण होने वाले रोग बहुत आर्थिक महत्व के होते हैं, क्योंकि हल्की मिट्टी की तुलना में भारी मिट्टी सत्रकृमि संख्या के निर्माण के लिए अनुकूल होती है। महाराष्ट्र में इस पेड़ से जुड़ी दस पौधे परोपजीवी सूत्रकृमि प्रजातियों की जानकारी दीहै। जड़ गॉठ सूत्रकृमि, मे. *इनकॉग्निटा* उनमें से एक है जो अनार फल में महत्वपूर्ण उपज हानि का कारण बनता है। महाराष्ट्र के कुछ क्षेत्रों में इस सूत्रकृमि का प्रकोप देखा गया है और अब यह अनार की नर्सरी और मुख्य खेत के लिए एक प्रमुख चिंता का विषय बन गया है। इसके अलावा, जड़ गांठ सूत्रकृमि, बैक्टीरिया, वायरस, माइकोप्लाज्मा, कीड़े और अन्य सूत्रकृमि से जुड़े रोग परिसरों के लिए जाने जाते हैं। जड़ गॉठ सूत्रकृमि ने इस फल की फसल में कवक रोगों के प्रतिरोध के टूटने में एक प्रमुख भूमिका निभाई। जड़ गॉठ सूत्रकृमि जटिल है, सबसे ज्यादा कवक के साथ में *इनकॉग्निटा*, सेराटोसिस्टिस फिम्ब्रिएटा और वे मुख्य रूप से रोपण सामग्री द्वारा मुख्य क्षेत्र में प्रेषित होते हैं। में इनकॉग्निटा सूत्रकृमि को महाराष्ट्र में अनार पर एक गंभीर समस्या के रूप में देखा गया है और इसके लिये चिन्हित हॉटस्पॉट में 32% उपज हानि हुई है। वर्तमान में अनार के तहत महाराष्ट्र के क्षेत्र नासिक, सोलापुर, सांगली, सातारा, धुले, अहमदनगर, पुणे और औरंगाबाद जिलों के कई गांवों में इसकी मौद्रिक रिटर्न और निर्यात के कारण लगातार बढ़ रहा है।

जांच और निदान

हाल ही में अनार उत्पादकों के पोषक तत्वों की कमी, पत्तियों का पीलापन, पौधे का बौनापन, सुखना/मुरझाना

(प्लेट–ए, बी) और भारी जड़ पित्त और पेड़ों पर कम फल बनने (प्लेट–बी, सी, डी) की समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। मिट्टी और जड़ के नमूनों की जांच करने पर ऐसे पेड़ जड़ गॉठ सूत्रकृमि से गंभीर रूप से संक्रमित पाए गए।

चुंकि अनार में जड़ गॉठ सूत्रकृमि की उपस्थिति और जुड़ाव को अब तक महाराष्ट्र में प्रलेखित किया गया है और यह माना जाता है कि सूत्रकृमि मुख्य रूप से नासिक जिले से सूत्रकृमि प्रभावित पौधों के माध्यम से अन्य संक्रमित क्षेत्रों से फैल सकते हैं। इसलिए अनार उत्पादकों से अनुरोध है कि वे अपने नुकसान को कम करने या प्रबंधित करने के लिए विभिन्न प्रबंधन अपनाएँ।

अहमदनगर जिला, सोलापुर, पुणे में सर्वेक्षण के दौरान मेरे द्वारा ली गई तस्वीरों में पीले, सूखे और बौने पेड़ों और मोटे बड़े जड़ गॉठ वाले लक्षण पाए गए।

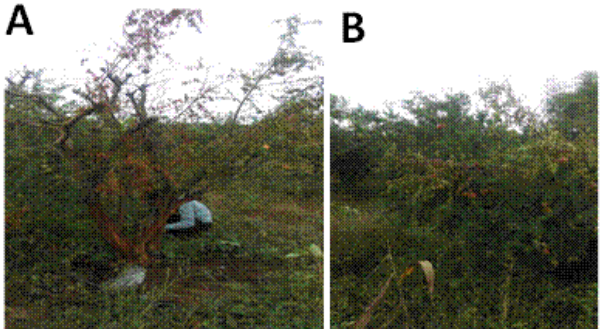

महाराष्ट्र में अनार के पेड़ जड़ गांठ सूत्रकृमि (*मेलोइडोगाइन इनकॉग्निटा*) से संक्रमित

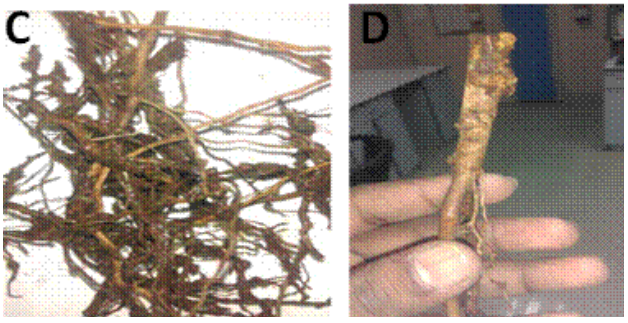

महाराष्ट्र में अनार की जड़ें जड़ गांठ सूत्रकृमि (*मेलोइडोगाइन इनकॉग्निटा*) से सवंमित

प्रबंधन दृष्टिकोण

अनार की नर्सरी से जुड़े सूत्रकृमि की घटना और नियंत्रण का अध्ययन करने के लिये 2018–19 के दौरान महाराष्ट्र के अहमदनगर, सोलापुर और पुणे जिलों में किए गए सर्वेक्षणों से पता चला कि जड़ गॉठ सूत्रकृमि (*मे. इनकॉग्निटा*) फंगस/कवक के साथ (सी. फिम्ब्रिएटस) सबसे अधिक बार देखे जाने वाले सूत्रकृमि हैं। इस अध्ययन के लिए जड़ गॉठ सूत्रकृमि संक्रमित अनार के पेड़ों से जीपीएस डेटा के साथ 32 मिट्टी और जड़ के नमूने जांच के लिये एकत्र किए। अनार के बागों में सूत्रकृमि की क्षति 40–45% तक गंभीर थी, यह सूत्रकृमि और कवक दोनों के संयोजन के कारण हो सकता है। अनार के बाग और नर्सरी में इस सूत्रकृमि का एक व्यवस्थित सर्वेक्षण गंभीरता से करने और इसके प्रबंधन के लिये एक उपयुक्त दिशानिर्देश प्रदान करने का आग्रह है।

अनार के पेड़ों में जड़ गॉठ सूत्रकृमि के साथ–साथ फफूद और अन्य परजीवी सूत्रकृमि के नियंत्रण के लिए अनार उत्पादकों द्वारा नीचे दिए गए निम्नलिखित प्रबंधन विकल्प अपनाए जा सकते हैं।

1. पौध की स्थापना/रोपण से पहले नर्सरी/मुख्य खेत की गर्मियों में गहरी जुताई करें ।
2. रोपण सामग्री अर्थात पौधा और गमले का मिश्रण जिसमें पौधा लगाया जाना है, जड़ गॉठ सूत्रकृमि से मुक्त होना चाहिए। पौधों के लिए सोलाराइज्ड़/स्टरलाइज्ड़ मिट्टी (पॉटिंग मिक्सचर) का उपयोग मिट्टी से पैदा होने वाले लगभग सभी रोगजनकों को खत्म कर देता है। पौधे लगाने के लिये उठी हुई मेड़ पर क्यारियॉ लगाने से वातन में वृद्धि होती है और अनार के बागों में मुरझाने की घटनाओं में कमी आती है।
3. रोपाई से पहले मुख्य खेत में फसल चक्रण।
4. कुलीन रोग मुक्त रोपण सामग्री का उत्पादन करने वाली वास्तविक प्रमाणित नर्सरी की स्थापना।
5. पॉलीथिन बैगों को भरने के लिये सोलराइज्ड़ मिट्टी का उपयोग करें या नर्सरी की मिट्टी को 2–3 सप्ताह

के लिए सफेद पारदर्शी शीट (100गेज़) द्वारा मई के महीने के दौरान मदर प्लांट से पॉलीथिन बैग या नर्सरी में ग्राफ्ट स्थापित करने से पहले उपयोग करें।

6. 20–24 टन/हेक्टेयर की दर से गोबर की खाद या नर्सरी में 2 टन/हेक्टेयर की दर से अखाद्य तेल खली का प्रयोग और साथ ही प्रति रोपण के समय मुख्य खेत में और 'बहार' में हर साल करें।

7. यदि मुरझाने की बीमारी *सी.फ़िम्ब्रियाटा* कवक से प्रेरित है, तो आईसीएआर–एनआरसीपी की वेब साइट पर ऑनलाइन प्रकाशित प्रबंधन सलाह का पालन करने की सिफारिश की जाती है।

8. हरी खाद की फसल के रूप में सनई उगाना जो प्रतिरोधी ट्रैप फसल के रूप में भी कार्य करता है, जहाँ सूत्रकृमि सूर्य भांग की जड़ों में प्रवेश कर सकता है लेकिन गुणा करने में विफल रहता है।

9. *एस्पेरजलिस नाइगर* एएन 27 (आईआरजी 07), माइकोराइजा (राइजोफैगस अनियमितता/ग्लोमस अनियमितता) और *पेनिसिलियम पिनोफिलम* @ 1 किलो/एकड़ के रूप में एक या अधिक आशाजनक जैव–सूत्रीकरण लागू करें। (ट्राइकोडर्मा विराइड या टी. हर्जियानम, स्यूडोमोनास फ्लोरोसेंस, पेसिलोमाइसेस लिलासिनस @ 1 किग्रा/एकड़ वैकल्पिक है)।

10. प्रत्येक बायोएजेंट (माइकोराइजा को छोड़कर) को छाया में अलग से गुणा किया जाना चाहिए। 1 टन अच्छी तरह से विघटित खाद के साथ 1 किलो बायो फॉर्म्यूलेशन मिलाया। अच्छी तरह से विघटित खाद का उपयोग करके प्रत्येक फॉर्मूलेशन के लिए १फीट ऊंचा बेड़ तैयार करें, बायो फॉर्म्यूलेशन मिलाएं, इन बेड़ में 50–60% नमी बनाए रखें, नमी बनाए रखने के लिए इसे बोरियों से ढ़क दें और हर 2–3 दिनों में मिट्टी को रेक/मिक्स करें। 10–15 दिनों के लिए सेते हैं।

11. जैविक एजेंटों को अलग से गुणा करने के बाद, माइकोरइजा @ 1 किग्रा/एकड़ में आवेदन से ठीक पहले मिलाएं और बायोफॉमेटड मिश्रण @ 10-20 ग्रा./पौधे को लगाएँ।

12. इन जैव एजेंटों को वर्ष में दो बार (एक बार स्थरिता की शुरूआत में, दूसरी फसल के नियमन पर) मिट्टी में लगाने से पोषक तत्वों की वृद्धि और रोगों के लिए जैव रासायनिक प्रतिरोध में मदद मिलती है, अनार के मुरझाने की भी जॉच होती है।

13. यदि जड़ गॉठ सूत्रकृमि की घटना अधिक है, तो पहला कदम रासायनिक नेमाटीसाइड की खोज करना है ताकि इसकी आबादी को नुकसान की सीमा से कम किया जा सके। किसान दानेदार नेमाटीसाइड फ्लुएनसल्फोन 2% जीआर का उपयोग कर सकते हैं। दानेदार नेमाटीसाइड का उपयोग करने के लिए, ड्रिपर के नीचे एक छोटा सा गड्ढ़ा (5–10 सेमी) बनाएं और दानेदार रसायन @ 10 ग्राम प्रति ड्रिपर (अधिकतम खुराक 40 ग्राम/पौधे से अधिक नहीं होना चाहिए) लागू करें; इसे मिट्टी से ढ़क दें और पानी देना शुरू करें।

14. ड्रेंचिंग एक अन्य नेमाटीसाइड जैसे फ्लूपीरम 34–48% एससी @ 2 मिली/पौधे के साथ भी किया जा सकता है। भीगने से पहले पौधों को पर्याप्त रूप से पानी पिलाया जाना चाहिए। दो लीटर पानी में 2 मिली नेमाटीसाइड मिलाएँ और 500 मिली प्रति (4 ड्रिपर/पौधा) या 10000 मिली प्रति ड्रिपर (2 ड्रिपर/पौधा) डालें।

15. इन नेमाटाइड्स का उपयोग या तो आराम की अवधि में या बहार के शुरूआती मौसम में किया जा सकता है। सूत्रकृमि आबादी की निगरानी में इन नेमाटाइड्स का उपयोग व्यावहारिक हो सकता है।

16. प्रभावी परिणाम प्राप्त करने के लिए 3–4 महीने के लिए अनार के पौधों के बीच की जगह में 'पूसा नारंगी गैंदा' और 'पूसा बसंती गैंदा' जैसी अफ्रीकी गेंदा किस्मों का रोपण।

17. अच्छी तरह से सड़ी हुई जैविक खाद, नीम की खली, वर्मीकम्पोस्ट और हरी खाद वाली फसलें जैसे सेसबनिया या सनहेम्प और ऊपर बताए गए बायोफॉर्म्यूलेशन को फैलाने से अनार में जड़ सूत्रकृमि के खतरे का प्रबंधन किया जा सकता है।

गोभीवर्गीय सब्जियों में माहु (*ब्रैविकोरिने ब्रैसिकी*) का एकीकृत कीट प्रबंधन

कुलदीप शर्मा[1], बीरेंद्र सिंह[1] एवं सुरेश यादव[2]
[1]महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, उदयपुर, राजस्थान
[2]भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

पत्तागोभी माहू, *ब्रैविकोरिने ब्रैसिकी* को आम तौर पर पत्तागोभी माहू कहा जाता है। इसे भारत में गोभीवर्गीय सब्जियों के विनाशकारी कीटों में से एक माना जाता है। माहू वाहक के रूप में भी कार्य करते हैं और पौधे के विषाणु रोगों को प्रसारित करते हैं। किसान उच्च मात्रा में बार–बार आवृत्ति के साथ विभिन्न प्रकार के रासायनिक कीटनाशकों को उपयोग करते हैं। कीट नियंत्रण के लिए रासायनिक कीटनाशकों के उपयोग से पर्यावरण प्रदूषण, कीटों के प्रतिरोध का विकास, परागणकों सहित गैर–लक्षित जीवों पर हानिकारक प्रभाव, कीट पुनरुत्थान, प्रकृति का संतुलन बिगड़ने और मनुष्य के स्वास्थ्य के लिए खतरा जैसी समस्याएं पैदा होती हैं। इसलिए, इस कीट को पारिस्थितिक रूप से प्रबंधित करना आवश्यक है जिसे एकीकृत कीट प्रबंधन कहा जाता है।

कीट का जीवनचक्रः पत्तागोभी माहू 2.0 से 2.5 मिमी लम्बे होते है और एक भूरे रंग की मोमी कवर के साथ होते हैं। शरीर पर लहराती सफेद मोमी रेशा के साथ निम्फ और वयस्क पीले–हरे रंग के होते हैं। गर्म जलवायु में माहू संभोग के बिना निम्फ को जन्म देती हैं। तापमान के आधार पर कुल जीवनचक्र की अवधि 16 से 50 दिनों तक होती है। उच्च तापमान पर जीवन चक्र छोटा होता है। ये फसल के मौसम के दौरान पर्यावरण की अनुकूल परिस्थितियों के आधार पर 15 पीढ़ियों को विकसित कर सकते हैं।

भोज्य फसलें: पत्तागोभी माहू ब्रासिकेसी (क्रूसिफेरी) कुल के पौधों पर आश्रित होते हैं, जिनमें मुख्य रूप से फूलगोभी (*ब्रैसिका ओलेरासिया बोट्रायटीस*), ब्रूसेल्स स्प्राउट्स (*ब्रैसिका ऑलेरासिया जम्मीफेरा*), ब्रोकोली (*ब्रैसिका ओलेरासिया इटैलिका*), पत्तागोभी (*ब्रैसिका ओलेरासिया कैपिटाटा*), तिलहन सरसों (*ब्रैसिका नैपस*), भारतीय सरसों (*ब्रैसिका जुनसिआ*), तोरिया (*ब्रैसिका रैपा*) और जीनस ब्रैसिका के अन्य सदस्य (जैसे, मूली (राफानस सैटिवस) और केल (ब्रैसिका अल्बोग्लबरा)।

क्षति के लक्षणः माहू में भेदने व चूसने वाले मुखांग होते हैं। माहू अपने मेजबान पौधों से रस चूसकर खाते हैं। निम्फ और वयस्क दोनों पत्तियों से रस को चूसते हैं, जिसके परिणामस्वरूप पतियों मे पीलापन, झुनझुनी, और विकृत प्राइमोर्डिया होती है। ये एक शक्रा अपशिष्ट उत्पाद भी बनाते हैं जिसे हनीड्यू कहा जाता है और हनीड्यू पर कालिख के फफूंद (सूटी मोल्ड) उगते हैं। गंभीर रूप से संक्रमित पौधे छोटे चिपचिपे, माहू के द्रव्यमान से ढक जाते हैं जो अंततः पत्ती की मृत्यु और क्षय का कारण बन सकते हैं। माहू कृषि संबंधी चिंता का विषय है क्योंकि यह कम से कम 20 विषाणु रोगजनकों का एक वाहक है, जो गोभीवर्गीय सब्जियों की फसलों में बीमारियों का कारण बनता है।

चित्र 1: माहू संक्रमित पत्तागोभी

प्रबंधनः माहू के आगमन के लिए हर हफ्ते खेत का निरीक्षण किया जाना चाहिए। एकीकृत कीट प्रबंधन (आई पी एम) में विभिन्न विधियों का एकीकरण शामिल करना चाहिए। जैसेः

कृषण नियंत्रणः

- ❖ फसल की अगेती बुवाई (15 अक्टूबर से पहले बोई गई फसल को नुकसान से बचाया जा सकता है)।
- ❖ नाइट्रोजन उर्वरकों की संतुलित मात्रा उपयोग करें।
- ❖ किसी भी वैकल्पिक मेजबान पौधों जैसे कि सरसों या अन्य ब्रासिकेसी वाले खरपतवारों को खेत में न रहने दें।
- ❖ मौसम के अंत में पौधे के मलबे को नष्ट करने से समशीतोष्ण जलवायु में माहू के अंडे को मारने में मदद मिल सकती है।

यांत्रिक नियंत्रणः

- ❖ वयस्कों (पंखों वाले वयस्क माहू) की निगरानी के लिए फसल की केनॉपी के ऊपर पीले चिपचिपे पाश/ 12 संख्या प्रति हैक्टर सेट करें।
- ❖ प्रारंभिक चरण में माहू की आबादी के साथ संक्रमित पौधों के हिस्सों को हटाएँ।

जैविक नियंत्रणः

- ❖ माहू के प्राकृतिक शत्रुओं का संरक्षण करें, जैसे लेडीबर्ड बीटल (*कॉक्सिनेला सेप्टम्पंक्टाटा* और *मेनोचिलस सेक्समेकुलटस*)। ये माहू के कुशल शत्रु हैं। अन्य शत्रु जैसे कि ग्रीन लेसविंग फ्लाई (*क्राइसोपरला कार्निया*) माहू कॉलोनी को कुशलतापूर्वक खाता है।
- ❖ पैरासिटॉइड वास्प (डायरेटियाला रैपै) एक बहुत ही सक्रिय जैव–नियंत्रण एजेंट है जो माहू में अपने अंडों को देकर इसे खाता हैं।
- ❖ एंटोमोपैथोजेनिक कवक (*वर्टिसिलियम लेकेनी*) का उपयोग करें जो माहू में बीमारियों का कारण बनता हैं।
- ❖ नीम आधारित जैव कीटनाशक का छिड़काव करें, जैसे 2% नीम का तेल या 5% NSKE।

चित्र 2: माहू परजीवाभ्य (डायरेटियाला रैपै), माहू शत्रु लेडीबर्ड बीटल एवं ग्रीन लेसविंग फ्लाई

रासायनिक नियंत्रणः

- ❖ परागणकर्ताओं को बचाने के लिए शाम के समय छिड़काव किया जाना चाहिए।
- ❖ अलग मोड–ऑफ–एक्शन ग्रुप के कीटनाशकों का छिड़काव किया जाना चाहिए। जिससे माहू के प्रति प्रतिरोध के विकास को रोकने में मदद मिल सके।
- ❖ आर्थिक देहली स्तर (ईटीएल स्तर) (50 माहू प्रति पौधा) होने पर रासायनिक कीटनाशकों का छिड़काव किया जाना चाहिए। निम्नलिखित कीटनाशकों में से एक के साथ फसल पर छिड़काव करें। इमिडाक्लोप्रिड 17.8: / 0.25 मिली / लीटर पानी, थियामेथोक्साम 25 डब्ल्यूजीः / 0.2 ग्राम / लीटर पानी, डाइमेथोएट 30 ईसी / 1 मिली / लीटर पानी, मैलाथियोन 50% ईसी 1.5 मिली / लीटर पानी, या क्विनालफॉस 25% ईसी 1 मिली / लीटर पानी। रासायनिक कीटनाशियों का छिड़काव दोहराना पड़े तो कीटनाशी को बदल देना चाहियें। एक ही तरह के कीटनाशी का छिड़काव दुबारा ना करें।

फलों की सघन बागवानी

संजय कुमार सिंह, कन्हैया सिंह एवं जय प्रकाश
फल एवं औद्यानिकी प्रौद्योगिकी संभाग
भा०कृ०अनु०प०– भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान नई दिल्ली–११००१२

भारत फलोंत्पादन में अग्रणी देश है, परंतु अन्य फल उत्पादक देशों विषेषकर विकसित पश्चिमी राष्ट्रों, चीन, इज़राइल आदि की तुलना में भारत में फलों की कम औसत उत्पादकता और फल गुणवता चिन्ता के विषय हैं। भारत में निम्न फल उत्पादकता का एक मुख्य कारण कम सघनता वाले परंपरागत बागों का बहुतायत में पाया जाना है। पश्चिमी देशों में शीतोष्ण फलों जैसे सेब, चेरी और आड़ू में सघन बागवानी द्वारा उच्च उत्पादकता और सार्थक परिण ाम प्राप्त हुए हैं। भारत में भी विभिन्न अनुसंधान संस्थानों द्वारा किए गए प्रयोगों से यह सिद्ध हुआ है कि सघन बागवानी प्रति इकाई क्षेत्रफल उत्पादकता बढ़ाने में सक्षम है एवं प्रति ब्यक्ति घटते जोत के समय में एक कारगर विकल्प है।विभिन्न सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय चुनौतियों को दृष्टिगत रखते हुए परंपरागत खेती में कुछ अहम बदलाव लाने की आवश्यकता है।खाद्य सुरक्षा की बदलती अवधारणा, स्वास्थ्य के प्रति सचेत उपभोक्ता, बढ़ती हुई जनसंख्या, शहरी विकास, औद्योगीकरण, भूमि एवं अन्य संसाधनों की बढ़ती हुई लागत तथा फलों की बढ़ती हुई मांग जैसे कारकों को ध्यान में रखते हुए यह आवश्यक है कि फलों की खेती को बढ़ावा दिया जाए। वैश्विक जलवायु परिवर्तन को ध्यान में रखकर पर्यावरणीय सुरक्षा सुनिश्चित कर मृदा क्षरण और जल अपव्यय रोकने हेतु फलों की खेती में संसाधन संरक्षण प्रौद्योगिकियों का वृहत स्तर पर प्रयोग आवश्यक हो गया है। इस संदर्भ में सघन बागवानी प्रौद्योगिकी एक उत्तम विकल्प प्रस्तुत करती है। इस प्रौद्योगिकी के व्यावसायीकरण द्वारा भारत में फलोंत्पादन को एक अधिकाधिक लाभ वाले उद्यम में परिवर्तित किया जा सकता है।

सघन बागवानी का तात्पर्य प्रति इकाई क्षेत्र में अधिक से अधिक फलवृक्षों को समायोजित करके उपलब्ध संसाधनों का इष्टतम प्रयोग करते हुए अधिकाधिक उत्पादन और लाभ प्राप्त करने से है। सघन बागवानी का प्रारम्भ सर्वप्रथम यूरोप में 1960 के दशक में सेब में प्रारम्भहुआ। सेब में सघन बागवानी की शुरुआत का श्रेय इंग्लैण्ड में विकसित मैलिंग–मर्टन अनुक्रम के बौने मूलवृन्तों को दिया जाता है। यूरोप में आरंभिक सफलता के बाद धीरे–धीरे सघन बागवानी का प्रसार दूसरे देशों में हुआ। वर्तमान में यूरोप, संयुक्त राज्य अमेरिका, आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड आदि देशों में शीतोष्ण फलों में सघन बागवानी बड़े स्तर पर अपनाई जा रही है।

उपलब्ध संसाधनों जैसे भूमि, जल, सौर ऊर्जा और उर्वरकों का न्याय संगत उपयोग करते हुए फल उत्पादन में नियमित और टिकाऊ लाभ प्राप्त करना सघन बागवानी के मुख्य उद्देश्य है। सघन बागवानी के मुख्य लाभ नियमित और शीध्र फलन, अधिक उपज और उन्नत प्रक्षेत्र प्रबंधन है। फल फसलों में सघन बागवानी हेतु अनेक रणनीतियों का विकास किया गया है। इनमें कम दूरी पर पौध रोपण, आनुवांशिक रूप से बौनी प्रजातियों और बौने मूलवृन्तों का प्रयोग, उचित कटाई–छ्टाई और पादप वृद्धि नियामकों जैसे कलटार (पैक्लोब्यूट्राजाल) का प्रयोग मुख्य है। वर्षों के सतत अनुसंधान के फलस्वरूप फलों में वृक्ष स्थापत्य और पादप कार्यिकी में अर्जित ज्ञान, अनेक फलों में बौनी प्रजातियों व मूलवृन्तों का विकास और प्रभावशाली पादप वृद्धि अवरोधक जैसे कलटार के सुगम उपलब्धता ने सघन बागवानी उद्यम को नयी सार्थकता और स्वीकार्यता प्रदान की है।

शीतोष्ण फलों में सघन बागवानी प्रौद्योगिकी की क्रमागत उन्नति का प्रभाव उष्ण– कटिबंधीय और उपोष्ण फलों पर भी पड़ा है। ऐसा देखा गया है कि शीतोष्ण फलों में विकसित सघन बागवानी तकनिकियों में कुछ संशोधन करके उन्हें उष्ण–कटिबंधीय और उपोष्ण फल फसलों के अनुकूल बनाया जा सकता है। जहां तक उष्ण– कटिबंधीय और उपोष्ण फलों की बात है इनमें लघु अवधि वाली फसलें

जैसे केला, अन्नानास और पपीता में सघन बागवानी अधिक प्रायोगिक प्रतीत होती है। लघु अवधि वाली इन फसलों का लाभ यह है कि इनके पौध अंतरण मे की गई किसी भी गलती को अधिक वितीय नुकसान के बिना शीघ्र ही सुधारा जा सकता है। दिर्धावधि वाली बहुवर्षीय फसलों के साथ समस्या यह है कि उनकी सघन बागवानी के लिए उपलब्ध सूचना और विधियाँ पर्याप्त नहीं हैं। इन फलों में सघन बागवानी अनुसंधान की दिशा में प्रयास तेज करने की आवश्यकता है। दिर्धावधि वाली बहुवर्षीय फसलों में सघन बागवानी के लिए शीघ्रता में की गई कोई भी अनुशंसा हानिकारक होने के साथ ही उत्पादक प्रक्षेत्रों पर नकारात्मक प्रभाव छोड़ सकती है। अतः इन फलों में सघन बागवानी संबंधी कोई भी संस्तुति दिर्धावधि के प्रयोगों पर आधारित होनी चाहिए।

भारत में विभिन्न कृषि अनुसंधान संस्थान और कृषि विश्वविद्यालय सघन बागवानी तकनिकियों के विकास में प्रयासरत हैं। कई फलों जैसे आम, नींबू वर्गीय फल, केला, पपीता, अन्नानास, किन्नों, अमरूद और सेब में उपज संवर्धन और संसाधन संरक्षण के लिए सघन बागवानी पद्धति की क्षमता सफलतापूर्वक प्रदर्शित की जा चुकी है। भारत में विकसित की गई विभिन्न सघन बागवानी तकनिकियों का संक्षिप्त विवरण यहाँ फसल वार पस्तुत किया जा रहा है।

आम

भारत में आम की परंपरागत खेती में पौधों को सामान्यतः 8–10 मीटर की दूरी पर लगाते हैं। अधिक अंतरण के कारण उपलब्ध संसाधनो का समुचित उपयोग नहीं हो पाता जो निम्न उत्पादकता का एक मुख्य कारण है। आम में सघन बागवानी के व्यापक अवसर और इस संकल्पना की प्रायोगिकता बौनी और नियमित फलन देने वाली प्रजातियों जैसे आम्रपाली, सिंधु एवं अरुणिमा के विकास के कारण संभव हुई है। आम्रपाली प्रजाति में पौध रोपण त्रिकोणीय विधि से 2.5 मी x 2.5 मी की दूरी पर करते हैं। इस प्रकार प्रति हेक्टेयर 1600 पौधे समायोजित किए जाते हैं। यथासमय, आम्रपाली के सघन बागों की स्थापना स्वःस्थाने (इन सीटू) विधि से करनी चाहिए। इसका तात्पर्य यह है कि खेत में यथा–स्थान मूलवृन्तों को रोपना चाहिए और उन पर कलम बांधनी चाहिए। इस विधि से समय और संसाधनों की बचत होती है। पौधों को झाड़ीनुमा रखने के लिए प्रारम्भिक दो वर्षों तक शीघ्र कालिका की तुड़ाई आवश्यक है। रोपण के तीन वर्ष बाद पौधों में फलन शुरू हो जाती है। आम्रपाली के सघन बागों में अत्याधिक फलों के कारण उनका आकार समरुप नहीं होता है। इस समस्या को दूर करने हेतु फल आने के तुरंत बाद फलों का विरलीकरण आवश्यक है। बाग स्थापना के 12 वर्ष पश्चात अत्याधिक पादप वृद्धि के कारण फल उपज घटने लगती है। इस समस्या को दूर करने हेतु फल तुड़ाई के उपरांत शाखाओं की प्रति वर्ष छंटाई आवश्यक है।

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा विकसित क़िस्मों यथा पूसा अरुणिमा, पूसा सूर्या, पूसा प्रतिभा, पूसा श्रेष्ठ, पूसा पीताम्बर, पूसा लालिमा, पूसा दीपशिखा और पूसा मनोहरि के पौधे भी मध्यम ओज वाले होते हैं और निकट रोपण (6 मी x 6 मी) द्वारा सघन बागवानी हेतु उपयुक्त हैं। इन प्रजातियों के फल उच्च गुणवत्ता वाले होते हैं। इन प्रजातियों के फल निर्यात बाजार के लिए संस्तुत किए जाते हैं। सिंधु प्रजाति के पौधे भी सघन बागवानी के लिए उपयुक्त हैं। इन्हें 7.5 मी x 5.0 मी की दूरी पर लगाकर प्रति हेक्टेयर 400 पौधे समायोजित किए जा सकते हैं। दशहरी किस्म भी सघन बागवानी में 3.0 मी x 2.5 मी (1333 पौधे/है॰) की दूरी पर लगायी जा सकती है।सघन बागवानी में दशहरी किस्म के पौधों को 10 वर्ष की आयु तक सामान्य रूप से बढ़ने देते हैं। ग्यारहवें वर्ष में 50 प्रतिशत और बारहवें वर्ष मी अन्य 25 प्रतिशत शाखाओं की डीहार्निंग कर देते हैं। डीहार्निंग, गोविन्द वल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय पन्तनगर, द्वारा विकसित कटाई–छंटाई की एक विषेष तकनीक है जिसमें फल तुड़ाई के तुरंत बाद शाखाओं की कटाई छंटाई करते हैं जिससे पौधों की ऊंचाई और विस्तार लगभग आधा घट जाता है। दशहरी की सघन बागवानी में लगभग 18 टन/है॰ की उपज प्राप्त होती है।

आम में सघन बागवानी के लिए बौने मूलवृंतों के प्रयोग की भी संस्तुति की जाती है। उदाहरण के रूप में बहुभ्रूणीय मूलवृंत वेलाईकोलम्बन और ओलूर अलफ़ांजों किस्म में वृक्ष आकार घटाने में सक्षम है। आम में वृक्ष आकार नियंत्रित करने और नियमित फलन लेने हेतु पादप वृद्धि अवरोधक कलटार के प्रयोग की संस्तुति की जाती है। कलटार में पैक्लोब्यूट्राजाल सक्रिय, अवयक होता है। यह पादप वृद्धि

हार्मोन जिबरेलिन के जैव–संश्लेषण को बाधित कर आम के वृक्षों की वृद्धि नियंत्रित करता है जिससे नियमित फलन प्राप्त होती है। वर्तमान में महाराष्ट्र के अलफ़ांजों उत्पादक कलटार का व्यावसायिक प्रयोग कर रहे हैं।

केला

केले में सघन बागवानी व्यावसायिक रूप से काफीलोकप्रिय हो रही है। केले में सघन बागवानी उत्पादकता बढ़ाने, श्रमिक लागत घटाने और संसाधन उपयोग दक्षता बढ़ाने में सक्षम है। भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान, बेंगलुरु द्वारा विकसित तकनीकी में रोबस्टा/ ड्वार्फ कैवेन्डिस प्रजाति के पौधों को 1.5 मी x 1.5 मी की दूरी पर रोपकर प्रति हेक्टेयर 4,444 की पौध सघनता प्राप्त की जा सकती है। केले में सघन बागवानी से प्रति हेक्टेयर 100–120 टन फल उपज प्राप्त होती है। केले में सघन बागवानी का मुख्य लाभ उच्च उत्पादकता और उर्वरक प्रयोग में मितव्ययता है। परंतु इस तथ्य को घ्यान में रखना चाहिए कि केले में सघन बागवानी के सफल क्रियान्वयन हेतु टपकदार सिंचाई सुविधा कि उपलब्धता आवश्यक है। केले कि सघन बागवानी में मुख्य समस्या सूर्य के प्रकाश की सीमित उपलब्धता है जो पेडी फसल में पुष्पन, फसल अवधि, परिपक्वता और प्रदर्शन को प्रभावित करती है।

किन्नों

किन्नों एक नींबू वर्गीय फल है। भारत में नींबू वर्गीय फलों के बाग प्रायः कम सघनता वाले (250–350 पौधे/ है॰) होते हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली में एक दशक के सतत शोध ने किन्नों में सघन बागवानी का मार्ग प्रशस्त किया है। किन्नों में सघन बागवानी बौने मूलवृन्तों के प्रयोग पर आधारित है। ट्रायर सिट्रेंज (3000 पौधे/है॰), कर्णा खट्टा (1780 पौधे/है॰) और सोह सरकार (1110 पौधे/है॰) मूलवृन्तों के प्रयोग से किन्नों में सघन बागवानी संभव है। किन्नों के सघन बागों में फल लगना 3 वर्ष पश्चात आरंभ हो जाता है। फल सामान्य आकार के, अत्यधिक रसदार और उच्च गुणवत्ता वाले होते हैं। किन्नों के सघन बाग परंपरागत सामान्य बागों की तुलना में लगभग दोगुना लाभ देते हैं। किन्नों में विकसित सघन बागवानी तकनीकी का अपना अलग महत्व है क्योंकि यह छोटी जोत के किसानों द्वारा भी सफलतापूर्वक अपनाई जा सकती है।

अमरूद

अमरूद में सघन बागवानी बौने मूलवृन्तों के प्रयोग, रोपाई की विषेष विधियों और कटाई छटाई की विषेष तकनिकियों पर आधारित है। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा सघन बागवानी हेतु एक प्रभावशाली बौने मूलवृंत पूसा सृजन का विकास किया गया है। यह मूलवृंत इलाहाबाद सफेदा प्रजाति की सघन बागवानी के लिए उपयुक्त है। इस मूलवृंत के प्रयोग से वृक्ष आकार 50 प्रतिशत तक घट जाता है। इस प्रकार इलाहाबाद सफेदा के पौधों को 3 मी x 3 मी की दूरी पर रोपकर प्रति हेक्टेयर 1,111 पौधे समायोजित किए जा सकते हैं। इलाहाबाद सफेदा प्रजाति के पौधे पूसा सृजन मूलवृंत पर अधिक मीठे, अधिक विटामिन सी युक्त और मृदु बीजों वाले फल देते हैं। पूसा सृजन मूलवृंत अमरूद की उकठा बीमारी के प्रति भी सहिष्णु है। अमरूद में सघन बागवानी हेतु बाड़ पंक्ति पद्धति की संस्तुति की जाती है। इस पद्धति में पौध अंतरण 6 मी x 6 मी के स्थान पर 6 मी x 2 मी होता है। परंपरागत पद्धति की तुलना में बाड़ पंक्ति पद्धति में प्रति इकाई क्षेत्र लगभग दोगुनी उपज प्राप्त होती है। इस पद्धति में पौधों को वांछित आकार में रखने हेतु नियमित कटाई छंटाई की आवश्यकता होती है। केंद्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान लखनऊ द्वारा विकसित टापिंग और हेजिंग तकनिकियाँ अमरूद में वृक्ष आकार नियंत्रित करने में सक्षम हैं। इस संस्थान द्वारा विकसित की गई अति सघन बागवानी पद्धति (मीडो बाग पद्धति) में प्रति हेक्टेयर अमरूद के 5000 पौधे (2 मी॰ x 1 मी॰) समायोजित किए जा सकते हैं।

पपीता

पपीते में सघन बागवानी की संकल्पना बौनी किस्मों के विकास द्वारा संभव हुई हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा उत्परिवर्तन प्रजनन से विकसित प्रजाति पूसा नन्हा में फलन 30 सेंमी की ऊंचाई पर होता है। यह बौनी प्रजाति सघन बागवानी के लिए उपयुक्त है। पूसा नन्हा के पौधों को 1.2 मी॰ x 1.2 मी॰ की दूरी पर रोपकर प्रति हेक्टेयर 6400 पौधे समायोजित किए जा

सकते हैं। पूसा ड्वार्फ प्रजाति के पौधे भी बौने होते हैं और यह प्रजाति सघन बागवानी में 1.5 मी. x 1.5 मी. की दूरी (4444 पौधे/है.) पर रोपी जा सकती है।

अनन्नास

सघन बागवानी अनन्नास की खेती में उन्नत प्रौद्योगिकी है। पश्चिम बंगाल, त्रिपुरा और कर्नाटक के प्रगतिशील फल उत्पादक अनन्नास की सघन बागवानी व्यावसायिक स्तर पर कर रहे हैं। उपज बढ़ने के अतिरिक्त खरपतवारों का कम संक्रमण, फलों की धूप से सुरक्षा और पौधों का ना गिरना अनन्नास में सघन बागवानी के लाभ हैं। पौधों के सघन रोपण से फलों को छाया प्रदान करने वाली लागत भी कम हो जाती है। ऐसा इसलिए संभव है कि शीर्ष पत्तियों के सीधे अभिविन्यास के कारण फलों को नैसर्गिक छाया मिलती है। इस प्रकार समान रूप से पके हुए शोभायमान फल प्राप्त होते हैं। अनन्नास कि सघन बागवानी में अधिक वर्षा वाले आर्द्र क्षेत्रों के लिए प्रति हेक्टेयर लगभग 40,000 से 44,000 पौधे संस्तुत किए जाते हैं। कम वर्षा परंतु मृदु जलवायु वाले क्षेत्रों जैसे कर्नाटक में अधिक पौध सघनता (63,000 से 64,000 प्रति/ है॰) संस्तुत की जाती है। अनन्नास की सघन बागवानी में पौध रोपण के लिए दोहरी बाड़ पंक्ति पद्धति अपनाते हैं।

लीची

कई देशों के लीची उत्पादक वर्तमान में प्रति हेक्टेयर 300 से 1500 पौध घनत्व के साथ सघन बागवानी अपना रहे हैं। लीची के सघन बाग परंपरागत बागों की तुलना में लगभग दोगुना लाभ देते हैं। लीची में सघन बागवानी हेतु पौधों को छोटा रखने हेतु प्रतिवर्ष उचित कटाई छंटाई आवश्यक है। भारत में लीची के परंपरागत उद्यानों में वर्ग प्रणाली में पौधे 9 से 10 मीटर की दूरी पर रोपे जाते हैं। इस प्रकार प्रति हेक्टेयर लगभग 90–100 पेड़ों को समायोजित करते हैं। अनुसंधान प्रयोगों में यह देखा गया है कि युग्मित बाड़ा पंक्ति (डबल हेज) प्रणाली में लीची के पौधों को 4.5 मीटर x 4.5 मीटर x 9.0 मीटर कि दूरी पर रोपकर प्रति हेक्टेयर लगभग 329 पौधों को समायोजित किया जा सकता है। परंपरागत बागों की तुलना में लीची के सघन बाग प्रति इकाई क्षेत्र अच्छी गुणवत्ता की अधिक उपज देने में सक्षम हैं। लीची में सघन बागवानी की सफलता हेतु फलों की तुड़ाई उपरांत हल्की कटाई छंटाई की सिफ़ारिश की जाती है।

शीतोष्ण फल

भारत में शीतोष्ण फलों जैसे सेब, नाशपाती, आड़ू, आलू बुखारा और चेरी आदि के बाग परंपरागत सघनता वाले हैं। अतः प्रति इकाई क्षेत्र उत्पादकता बहुत कम है। भारत में सेब की सघन बागवानी धीरे धीरे लोकप्रिय हो रही है। सेब में सघन बागवानी चार प्रकार की होती है– निम्न सघनता (प्रति हेक्टेयर 250 से कम पौधे) मध्यम सघनता (प्रति हेक्टेयर 250–500 पौधे) उच्च सघनता (प्रति हेक्टेयर 500–1250 पौधे) और अत्यधिक सघनता (प्रति हेक्टेयर 1250 से अधिक पौधे)द्य पादप सघनता बढ़ने पर फल उपज तो बढ़ती है परंतु एक निश्चित सीमा के बाद फलों की गुणवता प्रभावित होती है। सेब में सघन बागवानी के मुख्य लाभ शीघ्र फलन, अधिक उत्पादकता, श्रम लागत में गिरावट और उन्नत फल गुण हैं। सेब में वृक्ष आकार एवं ओज नियंत्रित करने हेतु बौनी प्रजातियों और बौने मूलवृन्तों का प्रयोग, उचित कटाई छंटाई और पादप वृद्धि नियामकों का प्रयोग सहायक सिद्ध होता है। वर्तमान में जम्मू– कश्मीर, हिमाचल प्रदेश और उतराखंड के प्रगतिशील किसान मैलिंग–मर्टन 106 मूलवृन्त पर कलम बंधन से तैयार पौधों की सघन बागवानी कर रहे हैं। पश्चिमी देशों में सेब की सघन बागवानी में मैलिंग 9 मूलवृंत का बहुतायत से प्रयोग हो रहा है। भारत में बौने मूलवृन्तों जैसे मैलिंग 9 और मैलिंग 27 का मूल्यांकन प्रायोगिक स्तर पर अनवरत है। मुख्यतः बीजू मूलवृन्तों पर आधारित अन्य शीतोष्ण फलों के बाग कम सघनता वाले हैं। सेब के साथ आड़ू, नाशपाती, नेक्ट्रिन व चेरी में अति सघन बागवानी तकनीक का प्रयोग सफलतापूर्वक किया जा रहा है। इस विधि से एकीकृत उत्पादन पद्धति में काफी सुधार लाया जा सकता है।

भविष्य की चुनौतियाँ और संभावनाएं

भारत में फलों की सघन बागवानी में कुछ बाधाएं हैं। केले के अतिरिक्त अन्य फलों में बौनी प्रजाति के पौधे रोपण के लिए पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं हैं। अधिकांश फल फसलों में बौने मूलवृन्तों का अभाव है। पादप वृद्धि नियामकों जैसे कलटार के अनवरत प्रयोग से आम के

बागों में बंध्यता के समस्या देखी गई है। इन बाधाओं को शीघ्र दूर करने की आवश्यकता है। यद्यपि बौनी प्रजातियों और बौने मूलवृन्तों के प्रयोग से आम की सघन बागवानी में प्रायोगिक सफलता मिली है फिर भी यह पद्धति आम उत्पादकों के बीच प्रचलित नहीं हो पाई है। इस संदर्भ में आम में विकसित की गई सघन बागवानी रणनीतियों का किसान प्रक्षेत्रों एवं कृषि विज्ञान केन्द्रों पर प्रदर्शन आवश्यक है।

परंपरागत पद्धति की तुलना में सघन बागवानी उपलब्ध संसाधनों के दक्ष उपयोग में प्रभावी सिद्ध हुई है। सघन बागवानी प्रति इकाई क्षेत्र उत्पादकता बढ़ाने के लिए सबसे प्रभावी उपायों में से एक है। यह प्रौद्योगिकी प्रति इकाई क्षेत्र अधिक लाभ के साथ अधिकतम दीप्तिमान ऊर्जा और कार्बन संचयन हेतु कारगर है। नई उन्नत क़िस्मों के रोपण द्वारा सघन बागवानी को गति प्रदान करने की महति आवश्यकता है। सघन बागवानी हाईटेक फल उत्पादन तकनीकों जैसे टपक सिंचाई, फर्टिगेशन, मल्चिंग, जैव उर्वरक का उपयोग तथा पौध रोग एवं कीट प्रबंधन में भी सुगमता प्रदान करती है। यह मशीनीकरण के लिए भी उपयुक्त है।

सतत पाम तेल उत्पादन

[1]ए. अमरेंद्र रेड्डी एवं [2]एन.वी.कुंभारे
[1]भा.कृ.अ.प.–केंद्रीय बारानी कृषि अनुसंधान संस्थान, हैदराबाद
[2]भा.कृ.अ.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

भारत अपने खाद्य तेल की खपत का लगभग दो तिहाई आयात पर हर साल लगभग 70,000 करोड़ रुपये खर्च करता है। हमारे खाद्य तेल आयात का बड़ा हिस्सा पाम तेल है, क्योंकि यह वैश्विक बाजारों में सबसे सस्ता है, मुख्य रूप से इंडोनेशिया और मलेशिया से आयात किया जाता है और आम तौर पर मूंगफली तेल जैसे खाद्य तेलों की कीमत का लगभग आधा है। अब, भारत में कुल खाद्य तेल खपत का लगभग 25 मिलियन टन पाम तेल का 30% हिस्सा है। इसका उपयोग बेकरी से लेकर घरों में भोजन तैयार करने तक सभी प्रकार के भोजन तैयार करने में किया जाता है।

भारत हाल ही में घोषित खाद्य तेल – तेल पाम (एनएमईओ–ओपी) पर 11,040 करोड़ रुपये के राष्ट्रीय मिशन के माध्यम से अपनी आयात निर्भरता को कम करने की कोशिश करता है। भारत की विषाल विविध पारिस्थितिकी ताड़ के तेल के बागानों को उगाने की काफी गुंजाइश देती है। वर्तमान में, देश में तेल पाम के तहत केवल 8.25 लाख एकड़ जमीन है, जबकि इसके लिए आंध्र प्रदेश, अरुणाचल प्रदेश, अंडमान, असम, छत्तीसगढ़, कर्नाटक, ओडिशा, तमिलनाडु और अन्य पूर्वोत्तर राज्यों में 48.25 लाख एकड़ की पहचान की गई थी।

तेल–पाम मिशन के साथ, यदि 48.25 लाख एकड़ के संभावित क्षेत्र को रोपित किया जाता है, तो भारत पाम तेल का उत्पादन मौजूदा 2.81 लाख मीट्रिक टन से बढ़ाकर 9.65 मीट्रिक टन कर सकता है जो हमारे वर्तमान आयात के बराबर है।

ताड़ के तेल की खेती के कुछ अंतर्निहित फायदे थे, जैसे एक बार लगाए जाने पर, 30 साल तक लगातार उत्पादन होता है, और मुख्य फसल के अलावा नियमित आय के साथ अंतर–फसल की संभावना भी होती है। ताड़ के तेल के बागान अन्य तिलहन फसलों की तुलना में 5–8 गुना अधिक उपज देते हैं। विश्व स्तर पर, पाम तेल केवल 10% भूमि पर दुनिया के वनस्पति तेल की 35% मांग की आपूर्ति करता है। इसका मतलब है कि ताड़ के तेल से, हम पारंपरिक तिलहन जैसे मूंगफली प्रति यूनिट भूमि की तुलना में 3–5 गुना अधिक खाद्य तेल का उत्पादन कर सकते हैं, जो बहुत सारी भूमि को बचाता है और हरित अर्थव्यवस्था में योगदान देता है।

ताड़ के तेल उगाने वाले क्षेत्रों के आसपास तेल मिलों और पैकेजिंग केंद्रों की स्थापना के माध्यम से ताड़ के तेल के बागान ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर पैदा करते हैं। कुछ कार्यकर्ताओं द्वारा दिए गए तर्कों के विपरीत, ताड़ का तेल घने हरे आवरण और कई परतों में फसल उगाने के माध्यम से जलवायु परिवर्तन से लड़ने में मदद करता है। एक अनुमान से पता चलता है कि 1 एकड़ तेल पाम 8 टन कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित करता है और 9 टन ऑक्सीजन प्रति वर्ष छोड़ता है।

हालाँकि, इसके लिए सुनिश्चित सिंचाई सुविधाओं की आवश्यकता होती है, यह धान की तुलना में केवल एक चौथाई पानी की खपत करता है। कई लोगों को डर है कि बड़े कॉरपोरेट्स के प्रवेश के साथ, ताड़ के तेल की खेती को वनभूमि तक बढ़ाया जा सकता है और इससे वनों की कटाई और जैव विविधता का नुकसान होगा, लेकिन भारत में कड़े वन कानून वनभूमि को वृक्षारोपण में बदलने की अनुमति नहीं देंगे, इसलिए कथित खतरा केवल भ्रम है । हालांकि, जैव विविधता के आकर्षण के केंद्र को संरक्षित करने के लिए सावधानी बरतने की जरूरत है।

ताड़ के तेल के बागान शुरू करने के लिए प्रमुख बाधा प्रारंभिक निवेश है, जिसे किसानों को अन्य फसलों से ताड़

के तेल में स्थानांतरित करने के लिए प्रेरित करने के लिए रोपण सामग्री के लिए रू. 4,800 प्रति एकड़ से रू.11,600 प्रति एकड़ तक बढ़ी हुई सब्सिडी के साथ संबोधित किया जाता है। एक और बड़ी समस्या यह है कि पाम एक बारहमासी फसल होने के कारण, पाम तेल उत्पादकों को अंतरराष्ट्रीय कीमतों में उतार–चढ़ाव से उत्पन्न होने वाले साल–दर–साल मूल्य में उतार–चढ़ाव का सामना करना पड़ता है। प्रस्तावित योजना का उद्देश्य किसानों के खातों में सीधे धन हस्तांतरण के माध्यम से किसानों को इन कीमतों में उतार–चढ़ाव से बचाने के लिए एक व्यवहार्यता अंतर निधि प्रदान करना है। ताड़ के तेल के बागानों को बढ़ावा देने में एक बड़ी समस्या यह है कि कटाई के 24 घंटे के भीतर गुच्छों को संसाधित करना पड़ता है। पहचाने गए संभावित क्षेत्रों में और उसके आसपास मिलों द्वारा बाय–बैक व्यवस्था के लिए दीर्घकालिक संविदात्मक सेटिंग्स को प्रोत्साहित करके इस समस्या को दूर किया जा सकता है।

एक और बड़ी बाधा तेल मिलों से निकलने वाला कचरा है। ताड़ के तेल के ताजे फलों के गुच्छों के प्रसंस्करण से विभिन्न प्रकार के अवशेष उत्पन्न होते हैं। उत्पन्न कचरे में, पाम ऑयल मिल एफ्लुएंट (पीओएमई) को पर्यावरण के लिए सबसे हानिकारक अपशिष्ट माना जाता है, अगर इसे अनुपचारित छोड़ दिया जाए। यदि उचित तकनीक का उपयोग किया जाए तो इस कचरे को मूल्यवान उत्पादों जैसे फीड स्टॉक और जैविक उर्वरक में परिवर्तित किया जा सकता है। केंचुए वर्मीकम्पोस्ट जैसे मूल्यवान उत्पादों का उत्पादन करने वाले पोम को पचा सकते हैं। वर्मीकम्पोस्ट पोषक तत्वों से भरपूर एक उपयोगी उत्पाद है जिसका उपयोग ताड़ के तेल के बागानों में उर्वरक के रूप में किया जा सकता है।

कुल मिलाकर, पाम तेल मिशन निकट भविष्य में खाद्य–तेल परिदृश्य को बदलने की संभावना है, जिसमें आयात पर निर्भरता कम करने और किसानों की आय में वृद्धि करने की क्षमता है।

लेखकों से...

1. अपने तकनीकी एवं लोकप्रिय लेख हिन्दी में टाइप करवाकर भेजें।
2. रचना पृष्ठ के एक ओर उचित हाशिया और पंक्तियों के बीच स्थान छोड़कर सम्पादक, प्रसार दूत के पास यथा समय भेजें।
3. वर्ष 2015 से प्रसार दूत का अंक त्रैमासिक किया गया है। लेखकों से अनुरोध है कि प्रथम अंक के लिए प्रकाशनार्थ सामग्री 30 जनवरी, द्वितीय अंक 30 अप्रैल, तृतीय अंक 31 जुलाई तथा चतुर्थ अंक 31 अक्तूबर तक अवश्य भेज दें।
4. तकनीकी पर दी गई जानकारी की पूरी जिम्मेदारी लेखक की होगी। रचना को प्रकाशित करने या न करने का पूरा अधिकार सम्पादक मंडल को होगा।

प्रसार दूत का प्रकाशन समय

प्रथम अंक मार्च, द्वितीय अंक जून, तृतीय अंक सितम्बर और चतुर्थ अंक दिसम्बर में प्रकाशित होगा।

वार्षिक शुल्क 80/- मनीऑर्डर द्वारा भेजें।

शुल्क और सामग्री भेजने एवं पत्रिका मंगवाने का पता

प्रभारी अधिकारी

कृषि प्रौद्योगिकी सूचना केन्द्र (एटिक)

भा.कृ.अ.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

फोन: 011-25841670, 25846233, 25841039, 25803600

पूसा एग्रीकॉम: 1800 11 8989 (नि:शुल्क)

पाठकों से...

प्रसार दूत में प्रकाशित किसी भी तकनीकी के विषय में अंश और समाधान हेतु आपके पत्रों का स्वागत है। विषयों पर अधिक जानकारी के लिए लेखक से सीधे भी सम्पर्क कर सकते हैं।

किसानों से...

यदि आपकी खेती व पशु-पालन संबंधी कोई विशेष समस्या है, तो लिखकर भेजें। हम प्रसार दूत के माध्यम से उसका समाधान आप तक पहुंचाएंगे।

अन्त में ...

आपकी खुशहाली ही हमारी सफलता है।

प्रो. एम एस स्वामीनाथन पुस्तकालय

निदेशक, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012 द्वारा प्रकाशित तथा

मैसर्स एम एस प्रिंटर्स, सी-108/1 बैक साइड नारायणा इंडस्ट्रीयल एरिया, फेस-1, नई दिल्ली-110028, द्वारा मुद्रित

फोन: 7838075335, 9899355565, 9899355405,